पानी

हिन्दी ADDA

मनोज कुमार पांडेय

पानी

https://www.hindiadda.com/pani-manoj-kumar-pandey/

इस छत पर शरण लिए हुए हमें आज पाँचवाँ दिन है। हम जो इस गाँव के थोड़े-से बचे हुए लोग हैं - उन लोगों में से जो गाँव छोड़ कर भाग गए - जो भूख-प्यास से मर गए - जो बीमारियों की चपेट में आए - जो जेल गए - जिन्हें कीड़े-मकोड़ों और जीव-जंतुओं ने काट खाया या फिर जिन्होंने एक दूसरे को मार डाला। इन तमाम चीजों से बचे हुए हम बहुत ही कठकरेज लोग हैं। जिन्होंने तमाम अपनों को फूँका है। यहीं अपने ही घरों में, यहीं अपने आसपास। अगल-बगल के गड़हों में - पानी की तलाश में खोदे जा रहे गड्ढों में हमने न जाने कितने ही अपनों को दबा दिया। उन्हें सूखने के लिए छोड़ दिया। उन्हें कीड़े-मकोड़ों के लिए छोड़ दिया। फिर भी ये हमारी ही आँखें हैं जो यह सब कुछ देख रही हैं और अभी भी उनमें पानी बचा हुआ है।

यहाँ टीले पर हम कुल बहत्तर लोग हैं। हममें औरतें भी हैं, बूढ़े भी हैं और बच्चे भी। हम सब अलग-अलग घरों और जातियों से हैं। पर अभी यहाँ इस बात का कोई मतलब नहीं है। हमारे घर पानी में समा चुके हैं। पूरा गाँव तीन-चार दिनों के अंदर ही समतल मैदान में बदल गया है। सब तरफ पेड़ों के ठूँठ भर दिखाई देते हैं जिनमें पत्तियों का नामोनिशान भी नहीं दिखता। और यह बात भी हमारे मन में अभी ही आ रही है कि हम जानते भी नहीं कि किसी पेड़ में जीवन बचा भी है या सब के सब सूख कर लकड़ी ही हो गए हैं।

अभी तो हमारी आँखों में एक जैसे सवाल हैं। सभी के कानों में एक जैसा ही सन्नाटा बजता है। चारों तरफ पानी ही पानी है पर हमारी आँखों में जैसे अभी भी सूखा ही पसरा हुआ है। जो एक गुलब्बो नाम की कुतिया हमारे साथ बची रह गई है उसकी आँखों में भी।

हम एक साथ इस तरह से पानी उतरने का इंतजार कर रहे हैं जैसे सब एक ही घर से हों। पानी उतरें तो हम भी उतरें। उतरें तो कहीं रहने के लिए जगह बनाएँ। लोग कुछ भी कहें फिलहाल तो हमने साथ में ही रह जाने का फैसला किया है। हम इस बात को भूल ही चुके हैं कि अभी बस दस-बारह दिन पहले तक हम किस कदर मर और मार रहे थे।

यह सब बहुत पुरानी बात नहीं है कि जैसे सबका जीवन होता है वैसे हमारा भी भरा-पूरा जीवन था। एक पूरा गाँव। हमारी ही नहीं कुत्ते-बिल्लियों तक की एक भरी-पूरी आबादी। पेड़-पौधे, जानवर, तालाब, लड़ाई-झगड़े, प्रेम, ऊँच-नीच सब कुछ वैसा ही जैसा आपने और जगहों पर देखा सुना होगा।

फिर अचानक सब कुछ बदल गया।

मेरा नाम गंगादीन है। मेरी उमर अंदाजन बीस साल है। मेरा अब तक का लगभग पूरा समय गाय-गोरू चराते हुए बीता है। कुछ समय के लिए गाँव के दूसरे चार-छह बच्चों के साथ मैं स्कूल भी गया था जो घर से करीब तीन कोस की दूरी पर था फिर काका ने स्कूल जाना बंद करा दिया। काका मगन ठाकुर के यहाँ हरवाही करते थे। इसके एवज में उन्हें खेती करने के लिए दस बिस्वा खेत मिला हुआ था। और मैं मगन के जानवर चराता था। बदले में काका को कुछ गेहूँ, बाजरा आदि मिल जाया करता।

मैं अपने गाँव का कोई इकलौता चरवाहा नहीं था। गाँव के कई दूसरे भी लड़के थे जो यही करते थे - टिटरू, नागालैंड, बच्चा, पुन्नी, भूरेलाल, छुट्टन, मोटरी, सुग्गे सहित और भी तमाम लड़के। तीन चार लड़कियाँ भी थीं - गुड्डन, पुरबी, आशा और गीता। मैं अपने दो जानवरों के साथ मगन के जानवरों को भी चराता था। पर ऐसा करनेवाला मैं अकेला नहीं था। और भी कई थे जो अपने जानवरों के साथ-साथ दूसरों के जानवर भी चराने ले जाते थे। अकेली गीता ही थी जिसका अपना एक भी जानवर नहीं था। वह मिसराने के दो तीन घरों के जानवर चराती थी।

हम अपने-अपने हिस्से के जानवरों को इकट्ठा करते और उन्हें साथ ले कर गाँव के उत्तर की तरफ के जंगल में चले जाते। जंगल के बीचोंबीच एक बरसाती नदी बकुलाही बहती है। जिसका पानी बरसात में कई बार इतना बढ़ जाता कि गाँव के उत्तर-पूरब में पड़नेवाले ताल और बकुलाही का पानी आपस में मिल जाते। पर यही बकुलाही गर्मियों में पूरी तरह से सूख जाती। तब बस नदी की धारा के बीचोबीच एक दूसरे से स्वतंत्र गड़हियाँ और गड्ढे भर बचते। जिनमें अक्सर हरी लिसलिसी जालीदार काइयाँ उग आतीं। हम मिल कर ये काइयाँ साफ करते और तब इन गड्ढों का पानी हमारे नहाने के काम से ले कर जानवरों के पानी पीने और नहाने तक के काम में आता। पीने के पानी के लिए हम अपने साथ लोटा-डोरी रखते और आसपास के किसी भी कुएँ से पानी खींच लाते। और हम जिधर भी जाते कुएँ मिल ही जाते।

नदी के दोनों तरफ एक लंबा-चौड़ा कछार फैला हुआ था। जिसमें तरह-तरह के पेड़ और ऊँचे-नीचे खड्डे फैले हुए थे। उनमें हम जानवरों को छोड़ कर दिन भर के लिए निर्विघ्न हो जाते। बाकी दिन भर के लिए हमारे पास बहुत सारे खेल थे - चिल्होर, गनतड़ी, कंचे, कबड्डी, चिब्बीफोर, चोर-पुलिस और भी न जाने क्या-क्या। लड़कियाँ आपस में गोट्टी खेलती या लँगड़ी-भचक। कई बार वे भी हमारे साथ खेलतीं पर हममें से कई उनके साथ बदमाशी करते इसलिए वे कभी भी हमारे साथ न खेलने का

निश्चय करतीं और दुबारा उसी घेरे में पहुँच जातीं। पर जल्दी ही उनका निश्चय टूट जाता और वे फिर हमारे साथ आ जातीं।

गर्मियों में हम कई बार देर-देर तक पानी में नहाते और कभी लड़कियाँ नहीं होतीं या दूर होतीं तो एकदम नंगे हो कर भी नहाते। कई बार लड़कियाँ होतीं तब भी। हम उन्हें बता देते या बिना बताए ही शुरू हो जाते तब लड़कियाँ अपना एक अलग झुंड बना कर कहीं अलग चली जातीं। और वहाँ से कई बार छुप-छुप के हम लोगों की तरफ देखती भीं। हालाँकि वे कभी भी नंगी हो कर नहीं नहातीं पर वे भी कभी नहातीं तो हम उन्हें छुप-छुप कर देखा करते। दोनों जानते कि दोनों ही एक दूसरे को छुप-छुप कर देखा करते हैं पर हम इस बारे में कभी भी बात न करते।

दोपहर में कोई एक गाँव जाता या गाँव से कोई एक आता तो वह हम सबकी खाने की गठरियाँ उठा लाता जिनमें रोटी-सब्जी, रोटी-चटनी, रोटी-अचार, या चटनी-भात जैसी चीजें होतीं। कई बार किसी-किसी की गठरी में बाजरा, चना, मटर या गेहूँ की घुघुरी भी होती और कई बार चटनी के साथ गुड़ भी।

साल भर यह क्रम ऐसे ही चलता। हमारे लिए जाड़ा गर्मी बरसात सब जानवर चराने के दिन थे। और जब फसलें कटतीं तो हम कई बार अपने जानवरों को उत्तर की बजाय पूरी आजादी से बाकी दिशाओं में भी मोड़ देते। बस जब खेती का समय आता तब कई बार लोग कम आते पर मैं तो तब भी जाता ही जाता। सिर्फ उन दिनों को छोड़ कर जब मगन को अपने खेतों में आदमियों की कमी लगती और वे मुझे भी वहीं लगा देते।

गाँव के उत्तर की तरफ एक तालाब था करीब आठ-दस बीघे में फैला हुआ। इसके बगल में एक ऊँचा भीटा था जो संभवतः इसी तालाब से निकली मिट्टी से बना होगा। तालाब बहुत पुराना था इतना कि गाँव के सबसे बुजुर्ग व्यक्ति ने भी इसे ऐसे ही देखा था और इसमें नहाते-धोते पला-बढ़ा था। यह तालाब साल के बारहों महीने पानी से लबालब भरा रहता था। गर्मियों में भी इसके पानी में बस जरा-सी ही कमी आती थी। किनारे कम गहरे में पुरइन और कुइयाँबेरी फैले हुए थे। और बीच में खूब गहरा पानी था। तालाब के सभी किनारों से पानी के तमाम रास्ते खेतों तक जाते थे। जगह-जगह पर रीक बने हुए थे जिनमें दुगला लगता था और पानी खेतों तक पहुँचता था। तालाब में पानी नीचे कम ही उतरता था पर इस बात पर लोगों में बहुत पुरानी सहमति बनी हुई थी कि पानी कितना नीचे चला जाएगा तो लोग तालाब से पानी निकालना बंद कर देंगे। यह सहमति मगन ठाकुर जैसे लोग ही तोड़ते पर अमूमन इसकी जरूरत नहीं ही पड़ती थी। कभी-कभार इस सहमति के उल्लंघन की हल्की-फुल्की पर बेहद

जरूरतमंद कोशिशें जरूर हुईं पर वे इतनी कम थीं और उस पर भी उसके पीछे की जो मजबूरियाँ थीं उसकी वजह से ये कभी आम चलन नहीं बन पाया।

तालाब के पूर्वी किनारे पर एक भीटा था जहाँ तरह-तरह के पेड़ थे। सबसे ऊपर बबूल और कैथा के पेड़ थे तो नीचे की तरफ आम, महुआ और नीम के। भीटा और तालाब के बीच की ये जगह गाँव भर का सामुदायिक केंद्र थी। गाँव भर के बच्चे यहीं पर खेलते थे। तालाब में तैरना सीखते थे। गाँव की ज्यादातर औरतों ने अपने लिए उपलियाँ पाथने की जगह यहीं पर खोज रखी थी। यही वह जगह थी जहाँ वह काम तो करती ही करती थीं साथ-साथ एक दूसरे से मिलती-बतियातीं भी थीं। यहीं तालाब के किनारे जानवरों को धोया-नहलाया जाता। इसी तालाब से अलग हो गए छोटे-छोटे गड्ढों में सनई सड़ाई जाती।

तालाब, भीटा और इसके बीच का मैदान किसी एक का नहीं था, समूचे गाँव का था, बल्कि गाँव के बाहर के लोगों का भी था। गर्मियों में लोग आते-जाते वहीं किसी पेड़ की छाया में बैठ कर सुस्ता लेते। वहीं से बरसात में सबसे पहले मेढकों की आवाज आती। शादी-ब्याह में वही तालाब पूजा जाता। औरतें वहीं तक बेटियों को विदा करने आतीं और असीसतीं कि इसी तालाब की तरह जीवन सुख से लबालब भरा रहे। पुरुष किसी रिश्तेदार की साइकिल थामे यहीं तक आते। गाँव का कोई दामाद पहली बार ससुराल आता तो यहीं पर रुक जाता और संदेश भेजता। लोग आते और थोड़ी देर की ठनगन के बाद उसे ले जाते। गाँव से मिट्टी उठती तो उसका पहला विराम यहीं होता। जाड़े में बनजारे और बेड़िया आते तो यहीं पर रुकते। भीटा पर उन्हें अपने लिए जगह मिल जाती और बगल के तालाब में जानवरों के लिए पानी। इसी भीटे और तालाब के बीच की जगह में चिकुरी-बनवारी और संपत हरामी की नौटंकियाँ खेली जातीं। यहीं पंचायत बैठती, यहीं बारातें रुकतीं। यहीं एक आम के पेड़ में गाँव भर का घंट बाँधा जाता।

खूब हरा-भरा था गाँव हमारा। हमारे जीवन में बहुत सारी छोटी-बड़ी मुश्किलें थीं, गरीबी थी... भूख थी पर इसी हरियाली के सहारे हम जैसे-तैसे इस सब से पार पा लेते थे। पर... पर कौन मानेगा कि महज एक ताल पाट देने से पूरा का पूरा गाँव तबाह हो गया! कुछ भी नहीं बचा। बचे हम बहत्तर लोग।

सिर्फ बहत्तर लोग! लगभग सात सौ लोगों में से सिर्फ बहत्तर लोग।

ये पूरे गाँव के लिए जान ही ले लेनेवाला दृश्य था जब मगन ठाकुर पता नहीं कहाँ से चार ट्रैक्टर ले आए। पता चला कि मगन ने इस पूरी जमीन का अपनी विधवा बूढ़ी माँ के नाम पट्टा करा लिया। तीन उठल्लू इंजन दिन-रात दस दिनों तक पानी खींचते रहे तब जा कर ताल का पानी कम होने को आया। तालाब का सारा पानी बकुलाही में उतार दिया गया। तालाब में न जाने कितनी मछलियाँ थीं जिन पर मिट्टी पाट दी गई। उन्हें अपने ही घर में दफन कर दिया गया। बरसात में निकलनेवाले मेढक पता नहीं कहाँ बिला गए। पेड़ काट दिए गए। चिड़ियों के घोंसले गिरा दिए गए। वे खरगोश और लोमड़ियाँ गायब हो गए जो तालाब के आसपास की झाड़ियों में जब तब दिखते रहते। भीटे पर बिल बना कर साही का एक पूरा परिवार रहता था जो मार दिया गया।

देखते ही देखते तालाब भीटा और मैदान सब एक बराबर तल में आ गए। बस भीटे का वह हिस्सा छोड़ दिया गया जहाँ एक पीपल के पेड़ पर पहलवान वीर बाबा के रहने की बात थी। कुल मिला कर बारह-तेरह बीघे का रकबा निकल आया जिसमें पहली फसल बोई गई आलू की।

पानी के लिए मगन ने अपने नए खेत के एक कोने में जहाँ महुआ का एक विशाल पेड़ हुआ करता था बोरिंग करवाई और पंप लगवाया। भकभक धकधक की जोरदार आवाज के साथ पानी की मोटी तेज धार हममें से बहुतों के लिए एक नई चीज थी। लोगों के लिए यह अचरज की बात थी कि पानी एक ऐसे कुएँ से निकल रहा था जो ऊपर से दिखाई ही नहीं देता था। भीतर से निकलती पानी की मोटी धार बताती थी कि भीतर बेहिसाब पानी है जो बाहर आने के लिए बेकरार है। पर यह भ्रम इतनी जल्दी टूटेगा यह हममें से कोई नहीं जानता था।

कुछ लोगों ने जरूर इस बात से डर जताया कि धरती के सीने में इस तरह से छेद करके लोहा डाले रखना एक दिन सबको बहुत महँगा पड़ेगा। इससे धरती की छाती फट जाएगी। धरती मैया का कोप पूरे गाँव पर टूटेगा। और यह धरती से हुए उस सदियों पुराने समझौते के खिलाफ भी है जिसमें धरती ने अपने ऊपर के सभी जीवधारियों को कभी प्यासा न रखने का वचन दिया था। पर बदले में कुछ शर्तें भी रखी थी खास कर मनुष्यों के सामने। क्योंकि धरती को सबसे ज्यादा अविश्वास मनुष्यों पर ही था। बूढ़ों को इस बात का बेहद मलाल था कि मनुष्यों ने धरती के उस सदियों पुराने अविश्वास को गलत साबित करने की कोई कोशिश नहीं की बल्कि इसे वे हमेशा सही ही साबित करते आए थे। पर इस तरह की बातों पर ज्यादातर लोग फिस्स से हँस दिए थे।

पर यह सब कुछ इतनी आसानी से नहीं घटा था। जब पानी निकालने के लिए इंजन लगा तो गाँव के लोग एकबारगी तो कुछ समझ ही नहीं पाए थे। पर समझते ही बीसों लोग लाठी-बल्लम ले कर डट गए थे कि यह तालाब उनकी लाश गिरने के बाद ही पाटा जा सकेगा। और काफी देर की बहस के बाद मगन पीछे हट गए थे।

उसी रात मगन के यहाँ से गोहार मची कि डकैती पड़ी है। रात भर हल्ला मचा रहा और अगले रोज मगन ने डकैती की नामजद रिपोर्ट कराई। जिसमें उन दस बारह लोगों का नाम था जो तालाब पाटने का विरोध करने में सबसे आगे थे। लोगों को इस बारे में कुछ पता ही नहीं चला। सभी आरोपी अपने अपने घरों में धर लिए गए। बल्कि कुछ तो अपनी उस उत्सुकता के चलते ही धरे गए जो पुलिस की गाड़ी देख कर खुद ही पहुँच गए थे। गाँव में इतने बड़े पैमाने पर गिरफ्तारी बहुतों के लिए जान ही ले लेनेवाला दृश्य था। सब पुलिस की मार से डरे हुए थे बस इससे ज्यादा किसी को कुछ भी नहीं पता था कि उन सब का क्या होगा या उन्हें कितने दिन जेल में रखा जाएगा।

अगले दिन फिर से तालाब पाटा जाने लगा। लेखपाल के साथ साथ पुलिस की एक पूरी जीप थी जो मौके पर शांति बनाए रखने के लिए आई थी। और उन दबंगों को रोकने के लिए भी जो एक गरीब बूढ़ी विधवा को अपनी जमीन समतल करने नहीं दे रहे थे जिसमें कुछ खेती वेती करके वह अपना जीवन यापन कर पाती। बाकी शांति बनाए रखने के लिए मगन के घर पर भी तमाम हथियारों से लैस शांतिप्रेमियों की अच्छी खासी भीड़ इकट्ठा थी।

दो दिन बाद ही मगन पेड़ काटने और मिट्टी वगैरह लादने खोदने के लिए गाँव में मजदूर ढूँढ़ रहे थे। उन्होंने मजदूरी बढ़ाने का एलान किया तो ज्यादा तो नहीं पर जबर को खुश रखने की मजबूरी के ही तहत दस बारह मजदूर उनके हाथ आ ही गए। इसे तालाब पाटे जाने को ले कर गाँव की स्वीकृति मान ली गई।

डकैती के आरोप में जेल गए लोगों के सामने मगन ने शर्त रखी कि अगर वे आइंदा उनके रास्ते में न आएँ तो वे डकैती का आरोप वापस ले लेंगे। बस एक जमुना कुर्मी के बेटे आशाराम को छोड़ कर सभी लोगों ने मगन का कहा मान लिया। बदले में मगन ने यह कहते हुए अपना आरोप वापस ले लिया था कि उन्हें गलतफहमी हो गई थी। ये लोग तो उन्हें डकैतों से बचाने आए थे।

आशाराम को छुड़ाने के लिए जमानत के लिए जमुना को अपनी मुर्रा भैंस बेचनी पड़ी थी। आशाराम ने आते ही ऐलान किया था कि जब तक मगन की ऐसी की तैसी नहीं कर देता तब तक चैन से नहीं बैठेगा। तीसरे-चौथे दिन ही आशाराम फिर से किसी

दूसरे आरोप में धर लिया गया। उसके बाद तो यह क्रम बन गया की जमुना उसे कुछ बेंच-बाँच कर छुड़ाते और वह फिर किसी दूसरे आरोप में धर लिया जाता। डकैती के आरोप में पकड़े गए बाकी लोगों में भी गुस्सा था पर वह भीतर ही भीतर खदबदा रहा था और उसे बाहर निकलने का रास्ता नहीं मिल रहा था।

जाड़े की शुरुआत में बनजारे आए तो अपने टिकने की जगह बराबर और उस पर फसल लगी देख न जाने क्या बुदबुदाते हुए चले गए। वे हमारे गाँव में इस बार पल भर भी न रुके थे।

अचानक सूखे ने दस्तक दी। ये तालाब पाटने के बाद का दूसरा ही साल था। हम ये दस्तक नहीं पढ़ पाए। बरसात की शुरुआत में बल्कि जरा पहले ही अच्छी बारिश हुई थी। अरहर, बजरी, जोंधरी, तिल आदि सब बोए जा चुके थे। धान की बेहन तैयार थी बल्कि ज्यादातर लोगों का धान लग चुका था। कुछ भी ऐसा नहीं था कि हम डरते या हमें डरने की कोई वजह नजर आती। पर धीरे-धीरे आसमान साफ होता गया। और फिर आसमान में अजीबोगरीब बादल प्रकट हुए। लाल-मटमैले बादल। जो आसमान में सदा छाए रहते पर हमारी तरफ पानी की एक बूँद भी न गिराते। धूप भी जैसे अजीब तरह से सूख कर ऐंठ गई थी और अब रेशा-रेशा बिखर रही थी। ऐसा अजीबोगरीब मौसम हमने पहली बार देखा था फिर भी हम इसमें कोई असामान्य बात नहीं बूझ पाए। एक दो पुरनियों ने जरूर घाघ भड्डरी के सहारे कुछ कहना चाहा था पर हममें से शायद ही किसी ने उनकी बातों पर कान दिया हो।

तालाब खत्म हो जाने से आसपास के खेतों में सिंचाई का संकट पैदा हो गया था। ऐसे समय में मगन प्रकट हुए। मगन ने कहा कि उन्होंने पंप सिर्फ अपने लिए नहीं लगाया है बल्कि पूरे गाँव की सोच कर लगाया है। ज्यादातर गाँववालों ने मगन की बात मान ली। हमारे पास और कोई चारा भी नहीं बचा था। और हमारे अंदाजे की मानें तो जितनी पूरे गाँव की आमदनी नहीं रही होगी उससे ज्यादा अगले दो सालों में मगन ने पानी बेच कर कमाया।

ऊपर से खेत थे हमारे कि न जाने कितनी प्यास थी उनके भीतर। खेतों में पानी कहाँ और कितनी जल्दी गायब हो जाता था कि हम सोच में पड़ जाते। जो फसलें एक दो पानी में हो जाती थीं वे पाँच-छह सिंचाई के बाद भी और पानी पीने को तैयार बैठीं थी।

मगन ने पानी दिया पैसा लिया। सीधा-सा हिसाब। जिन घरों के जवान डकैती में फँसाए गए थे उनमें से भी कई लोग फसलों को बचाने के लिए मगन की शरण में आ ही गए। या कहें कि आना ही पड़ा उन्हें। उनकी स्थिति मगन से लंबी दुश्मनी की इजाजत नहीं देती थी। जिनके खेतों में पानी जाने का कोई सीधा रास्ता नहीं था... उनके लिए मगन पाइप खरीद कर ले आए जो बिना नाली के ही सीधे खेतों में पानी पहुँचा देता। और सच कहें तो अगर पैसे की बात न होती तो हममें से बहुतों को यह व्यवस्था बहुत ही भली लग रही थी। हर तरह का झंझट खत्म। 'ठीक बात है पर ऐसी हर चीज पर शक करो जो तुम्हें नाकारा बनाए। तुम्हारा काम छीने। सब कुछ वही करने लगेगी तो तुम क्या करोगे?' यह मेरी अम्माँ थीं जिन्होंने एक दिन मुझे समझाते हुए कहा था।

कायदन यह चोरी थी। पानी पूरे गाँव का था। लोगों को उनके ही हिस्से का पानी बेचा जा रहा था और इस पर अभी लंबे समय तक किसी का ध्यान नहीं जाना था।

तालाब पाट दिए जाने के बाद गाँव की खेती का भूगोल बदल गया था। चारों तरफ से पानी आने और जाने का रास्ता तालाब की तरफ से हो कर जाता था। तालाब रहा नहीं तो सारे पानी का रास्ता खो गया था। शुरुआती बारिश का पानी जो तालाब में आता तो हमें जीवन देता उसी रास्ते से बकुलाही की तरफ बह गया जिस रास्ते से तालाब का पानी बकुलाही की तरफ गया था। यही उसका देखा जाना रास्ता था।

जिनके कुएँ उनके खेतों के नजदीक थे या दूर ही थे पर पानी का रास्ता खेतों तक जाता था उन्होंने पुर का सहारा लिया। और दो बैलों और चमड़े के बने पानी के बड़े थैले मोट के सहारे अपने खेतों में उम्मीद बचाए रखने की जद्दोजहद में जुट गए। पर जिनके पास ऐसा कोई विकल्प नहीं था उन्होंने मगन की बात मान ली।

सिर्फ तीन घर ऐसे रहे जिन्होंने मगन की कृपा नहीं स्वीकार की। जब उनकी फसल सूखने लगी तब भी। उन्होंने उसे काट कर जानवरों को खिला दिया।

ये इतनी आसान बात नहीं थी।

जमुना कुर्मी जब अपनी सूख रही फसल काटने गए तो खेत में ही चिल्ला-चिल्ला कर रोते रहे। देर तक। वे रोते-रोते कुछ बोलते और फिर बड़बड़ाने या चिल्लाने लगते। उनका बेटा आशाराम अभी भी किसी आरोप में जेल में बंद था। जमुना का चिल्लाना कोई नहीं समझ पाया। हफ्ते भर के अंदर ही जमुना ने अपना वह इकलौता दो बीघे का चक बेच डाला जिसे गाँव के ही रामनरेश ने खरीदा। हर कोई चकित था कि रामनरेश

के पास इतना पैसा कहाँ से आया पर राज तब जा कर खुला जब महीना बीतते-बीतते रामनरेश ने जमीन का बैनामा मगन ठाकुर के नाम कर दिया।

बदले में जमुना ने रामनरेश को दिन भर गाली बकी और अगले ही दिन सग्घड़ वगैरह पर अपना सब कुछ लाद कर ससुराल चल दिए जहाँ उनकी पत्नी रहती थीं। उन्हें गद्दी मिली थी। जमुना की माँ पहले से ही काफी बूढ़ी थीं, इस बुढ़ापे में यह सब बर्दाश्त नहीं कर सकीं और चल बसीं।

तब तक घर का सारा सामान जा चुका था। घर खाली रह गया था। एक खटोला भर था जिस पर जमुना की माँ रहती थी। जमुना ने माँ सहित उसी खटोले को घर के बीचोंबीच रखा, घर के ठाठ से लकड़ियाँ और सरपत वगैरह खींच कर निकाला और बीच गाँव उसी घर में ही चिता को आग दे दी। लोग दूर थे और इस स्थिति का सामना करने से बच रहे थे इसीलिए किसी को जमुना के माँ के मरने की बात पता ही नहीं चल पाई। उन्हें जलाने या फूँकने जैसी बात ही लोगों के जेहन में कहाँ से आती।

जब जमुना घर खाली कर रहे थे तो एक सुगबुगाहट तो थी पर ज्यादातर लोग उनसे नजरें मिलाने की हिम्मत नहीं कर पा रहे थे। ये भी हो सकता है कि जमुना के इस पलायन में लोगों को अपना भविष्य दिख रहा हो! जमुना के पास तो जाने के लिए एक जगह थी जहाँ वे जा रहे थे, बाकियों के पास तो कोई ऐसी जगह भी नहीं थी जहाँ वे जा सकते।

जमुना की माँ की चिता की आग ने जमुना के पूरे घर को अपने लपेटे में ले लिया। लोग दौड़े। जमुना घर के बाहर नीम के नीचे चबूतरे पर निर्लिप्त भाव से बैठे थे और माँ की विशाल चिता देख रहे थे। लोग आग बुझाने दौड़े पर गर्मी का समय था। कुओं में पानी बहुत नीचे था सो जमुना का घर जलने से वे क्या बचाते। बस किसी तरह आग को भयानक होने से बचाते रहे और मनाते रहे की हवा न चले। इस बीच जमुना चुपचाप उठे और धीरे-धीरे चलते हुए गाँव के बाहर हो गए। इसके बाद जमुना फिर कभी गाँव नहीं लौटे।

बीच गाँव में लाश जलाने का हर किसी ने बुरा माना था। पर इससे ज्यादा एक डर था जो सबके भीतर पसर कर कर बैठ गया था। फिर भी हममें से शायद ही किसी ने यह सोचा हो कि यह हमारे गाँव के मसान होने की शुरुआत थी। गाँव में जैसे सन्नाटा पसर गया था। एक चुप्पी थी जो सबके भीतर छा गई थी। लोगों ने अचानक से बोलना कम कर दिया। जो बोलते भी जैसे फुसफुसाते हुए बोलते। इससे साधारण से साधारण

बातों पर भी रहस्य का पर्दा तन गया। जैसे हवा में ही कुछ अजीब कुछ भयानक-सा घुल गया था।

मगन की बूढ़ी माँ जो ठकुराइन के नाम से जानी जाती थीं और बाहर निकलतीं थीं तो रास्ते, पेड़-पौधों और जानवरों से भी बतियाती चलतीं थीं अचानक से न सिर्फ चुप हो गईं बल्कि घर से निकलना भी बंद कर दिया। मेरा दिन में कम से कम दो बार तो मगन के यहाँ जाना होता ही था। उन्होंने मुझसे भी बात करना बंद कर दिया। अब वे दिखती ही नहीं थीं जल्दी। नहीं पहले तो 'क्यों रे गंगादिनवा ई कबरी की पीठ पर निशान कैसा है रे? कभी-कभी जानवरों को धुल भी दिया कर।' 'अपने जानवरों को वहाँ अलग ही रखा कर' से ले कर 'आज क्या खाया था रे' तक। या फिर 'अपनी अम्माँ को भेज देना कुछ काम है' तक... कभी-कभार शाम को एकाध ढोंका गुड़ भी पकड़ा देतीं कि जा पानी पी ले।

यह बरसात में गर्मी का मौसम था और आसमान में पानी कहीं नहीं था। दूर से दिखने पर हवा भी उबलती हुई दिखती थी। और उबलती हुई हवा की भाप पानी होने का भ्रम पैदा करती थी। ताल बचा नहीं था... बाकी छोटे-छोटे गड्ढे-गड़हियों को देख कर लगता ही नहीं था कि इनमें कभी पानी रहा होगा। उनकी तलहटियाँ चिटक कर अनगिनत टुकड़ों में बँट गई थीं। ताल के न रहने पर कुम्हार इन्हीं में से मिट्टी निकाल कर ले जा रहे थे। हम भी अपने घरों के लिए वहीं से मिट्टी निकाल कर ले आते थे। इस सब के बावजूद हमारे भीतर से ताल की याद और गंध नहीं गई थी।

हम मिट्टी को सूँघते और ताल जैसी महक न पा कर बेचैन हो जाते। हम मिट्टी कहीं से भी उठाते पर याद ताल को करते। हम में से शायद ही कोई ऐसा रहा हो जिसने अपनी हर एक साँस के साथ ताल को न याद किया हो। ताल की जगह पर खेत देखते तो हमें ऐसा लगता जैसे हम कोई सपना देख रहे हों और जब सो कर उठेंगे तो पानी से लबालब भरा ताल जस का तस मिलेगा। ताल पर हमें बहुत भरोसा था। हम में से किसी ने भी कभी ताल को पूरी तरह से सूखते हुए नहीं देखा था। हम में से कई मानते थे कि ताल के बीचोबीच पानी का कोई सोता है जहाँ से पाताल का पानी निकल कर ताल में मिलता रहता है। इसीलिए ताल कभी नहीं सूखता।

सिंचाई अब तक हमारे लिए ऐसी चीज थी जिसमें श्रम तो लगता था पर पैसे नहीं लगते थे। जिनके यहाँ लोग कम होते उनके यहाँ मदद को दूसरे लोग आ जाते। यह कोई एहसान या बेगार नहीं था एक दूसरे पर बल्कि एक पूरी व्यवस्था थी जो इसी

तरह चलती थी। पर अब सब कुछ बदल रहा था। सिंचाई की ही बात करें तो अब श्रम के पहले पैसे की जरूरत थी और हमारे पूरे गाँव में एक अकेले मगन को छोड़ कर पैसे का कोई स्थायी स्रोत किसी के पास नहीं था।

कुछ घरों से लोग दूरदराज के शहरों में कमाने जरूर गए थे पर उनका पता तभी चलता था जब चार-छह महीने में उनकी चिट्ठियाँ वगैरह आतीं। किसी के घर चिट्ठी आती तो ये पास-पड़ोस के लिए भी खबर होती। लोग आ जुटते राजी-खुशी की खबर लेने। डाकिया गाँव में बस कभी-कभार ही दिखता था। जब तक बहुत जरूरी न हो लोग डाक से पैसा मँगाना पसंद नहीं करते थे। अमूमन लंबे समय तक डाकिया पैसा अपने पास ही दबाए रखता। और जब देता तो देते समय पैसे ले कर आने के लिए एहसान जताता और पैसे का एक बड़ा हिस्सा झटक लेता।

ऐसी स्थिति में लोग अनाज बेच कर पैसे जुटाते थे। पर मौसम की अनिश्चितता को देखते हुए अनाज बेचने की हिम्मत कम लोग ही कर पा रहे थे। बल्कि ज्यादातर लोगों के पास इतना अनाज था ही नहीं की बेचा जाय। तब सिंचाई के लिए पैसे जुटाने के लिए लोगों ने वह काम करना शुरू किया जो अमूमन वह शादी ब्याह के मौके पर करते थे। यह था जेवर और खेत रेहन रखना, कई बार पीतल, फूल और ताँबे के बर्तन भी। सिंचाई के लिए रेहन रखना - यह ऐसी बात थी जो हमारे गाँव में पहले कभी नहीं घटी थी।

'सूखे बहुत पड़े पर सब निपट गए। इन्हीं ताल-तलैयों के सहारे। ताल में पानी कम हुआ तो हमने कम से ही काम चला लिया। पर ऐसा तो कभी नहीं हुआ कि कोई पानी बेचे और हम पानी खरीदें। यह अनहोनी है जो घट रही है। सब नास हो जाएगा। कुछ भी नहीं बचेगा,' गाँव के एक बुजुर्ग फग्गू पटेल ने आसमान ताकते हुए कहा था। यह कोई शाप नहीं था। यह उन बूढ़ी आँखों में छुपा बैठा आश्चर्य था, डर था। कुछ भयावह घटने की आशंका थी। और अब कोई भी इस तरह की बातों पर फिस्स से हँस नहीं पा रहा था।

बाहर बहुत कुछ ऐसा घटित हो रहा था जो लोगों के भीतर की ताकत को सोख ले रहा था पर वे अपने को और भी मजबूत दिखा रहे थे। वे अपना दमखम दिखा रहे थे। देवमणी पाँणे अस्सी की उमर में भी बिलारी फाँद जाते और पेड़ की डाल पर उल्टे लटकते हुए कहते कि ऐसे अकाल-फकाल बहुत देखे हैं। पर भीतर-भीतर उनकी आत्माएँ रोतीं-तड़फड़ातीं। कोई उनकी सुनता भले नहीं था पर ये बूढ़े अपनी बूढ़ी चमड़ियों में छिपे बैठे अनुभव से जानते थे कि चारों ओर बहुत कुछ ऐसा अघट घट रहा

है जो उन्होंने पहले कभी नहीं देखा सुना था। और ये भी कि ये सूखा ऊपर से ही नहीं आया है। उनके आसपास ऐसा बहुत कुछ है जो ये सूखा ले आया है। बल्कि ले आएगा बार-बार। वे ये भी जानते थे कि अब कितना भी पानी क्यों न बरसे पर ये जो पानी खरीदने-बेचने का सिलसिला चल निकला है ये शायद ही कभी खतम हो। वे मगन की निंदा करते, उसे सरापते पर इसके आगे क्या करें उनकी समझ में कुछ भी न आता।

जाने क्यों पर आजकल कई बूढ़ों को उन जमुना पटेल की बहुत याद आ रही थी जो अपना घर फूँक कर चले गए थे। कोई अपने ही हाथों से अपना घर फूँके ये भयानक और अविश्वसनीय था। पर जमुना ने ऐसा किया था और वे सब उन्हें रोक नहीं पाए थे। क्या वैसा ही कुछ भयानक और अविश्वसनीय बाकियों की भी राह देख रहा था!

कुछ इसी तरह से साल बीत रहा था। लोगों ने सिंचाई के लिए जमीनें तक रेहन रखीं ताकि बाकी के खेत हरे भरे दिख सकें। एक मगन थे और एक शिवराम थे जो बहुधंधी पंडित थे। पुरोहिती भी करते थे और दुकान भी रखते थे। खरीदने बेचने दोनों का काम था उनका। गाँव के ज्यादातर जेवर, बर्तन इन्हीं दोनों के यहाँ पहुँच गए। लोगों को इस बात का भारी मलाल था। पर यह मलाल उन हरी फसलों को देख कर थोड़ा कम हो जाता जो उम्मीदें पैदा करतीं थीं। तब ये कसक एक सपने में बदल जाती थी कि जल्दी ही फ्सलें होंगी। घर में साल भर के खाने का अनाज होगा। हो सकता है जरूरत से थोड़ा ज्यादा ही हो। तब बचा हुआ अनाज बेच कर जमीनें छुड़ा लेंगें। जेवर फिर से हमारे घरों में लौट आएँगे। कुछ के जेवर लौटे भी पर यह तो उन्हें कभी पता ही नहीं चलना था कि इस बीच उनकी चाँदी गिलट में बदल गई थी और जिन जेवरों के सहारे वे हारे-गाढ़े विपत्तियों से टकराने का हौसला रखते थे उनकी अब कोई कीमत नहीं रह गई थी।

खैर पंप के पानी के सहारे ही सही पर जमीन में नमी बरकरार रही। हममें से बहुतेरे मगन से भयानक असंतुष्ट थे पर इस डर के मारे कि कहीं वह हमें पानी देना बंद न कर दे हम कुछ बोलते नहीं थे। तो जो कुछ भी था थोड़ा सा ज्वार बाजरा हमारे घरों में आ ही गया। महुआ था... घरों के आसपास की नमी में उगाई गई सब्जियाँ थीं... जिस-तिस घर में थोड़ा-बहुत दूध-मट्ठा था... मतलब ऐसा कुछ नहीं था कि हम बहुत नाउम्मीद होते। जल्दी ही गेहूँ बो दिया गया। आलू लग गई। गेहूँ में मटर और सरसों सज गईं। आलू में मूली पालक कद्दू सरसों आ बिराजे। जानवरों के लिए चरियाँ या बरसीम बोई गई।

सब कुछ यथावत चलता दिख रहा था पर एक कनकनापन था जो पूरे गाँव की हवा में मिला हुआ था। लोगों के व्यवहार में अजीब से परिवर्तन हो रहे थे। लोग चिड़चिड़े हो रहे थे तो कई बार बिना किसी खास बात के भावुक भी। बूढ़े दिन-दिन भर पता नहीं क्या-क्या बड़बड़ाते रहते। कई बार अचानक से बिना किसी बात के रोने लगते। कोई बहुत बोलनेवाला अचानक से चुप रहने लगा था तो कोई चुप रहनेवाला बहुत बोलने लगा था। मेरा एक दोस्त था उसकी प्यास अचानक इतनी बढ़ गई थी कि पूरी की पूरी बाल्टी भर पानी पी जाता था। सब जगह यही हाल था। मगन की बूढ़ी माँ ठकुराइन आजकल फिर घर से बाहर निकल आईं थी और दिन भर नहाती रहती थीं। पंप की टंकी पर से मगन उन्हें भगा देते तो वे घर के सामने के कुएँ पर आ जातीं। दिन में कई कई बार होता उनका नहाना।

पर जो कुछ भी था हम उसके साथ जीना जानते थे। यह हमारा सदियों का संचित अभ्यास था। मैं मगन की बात नहीं कर रहा हूँ।

इसके बाद बेमौसम जो कुछ हुआ इसके बारे में हमने कभी सोचा भी नहीं था। हमें चेतावनी मिली थी पर हमने उसे अनसुना कर दिया था। जब कुओं में पानी तेजी से नीचे जाना शुरू हुआ तभी हमें समझ जाना चाहिए था। कुछ कुओं में मिट्टी मिला पानी आना शुरू हो गया था फिर भी हम नहीं चेते। फिर से वही फग्गू थे जिन्होंने कहा था कि 'पंप हमारे कुओं का सारा पानी खींच ले रही है। हम जल्दी ही पीने के पानी को भी तरसेंगे और मगन नाम की जोंक हमें पीने का भी पानी बेचेगी।' पर हममें से ज्यादातर लोग फग्गू की बात को सही मानते हुए भी चुप्पी लगा गए थे। एक भ्रम में बने रहना हमें ज्यादा ठीक लगा था कि क्या पता सब कुछ करीने से निपट ही जाय। पर इतना ही सच नहीं था।

हम में से ज्यादातर लोग मगन के सामने खड़े होने की स्थिति में नहीं थे। हमें इस बात का डर था कि मगन हमें पानी नहीं देगा। हमें मगन के पैसे का डर था। हमें मगन की ताकत और पहुँच का डर था। हमें उसके पुलिस बेटे का डर था। हमें मगन के घर में टँगी दुनाली बंदूकों का डर था। कोई भी जबर के मुँह नहीं लगना चाहता था।

जो भी हो पर हुआ यह कि पंप के पानी की धार पतली होने लगी। उसमें अब पहले जैसी ताकत भी नहीं बची थी। फिर भी पैसा हमें पहले जैसा ही देना पड़ता था और पंप का आलम यह था कि जिस खेत की सिंचाई घंटे भर में हो जाती उसमें तीन-चार घंटे लग जाते।

एक दिन मगन के दिमाग में भी खतरे की घंटी बज गई और मगन ने पानी देने से इनकार कर दिया। सही बात यह थी कि अब वे पानी को सिर्फ और सिर्फ अपने खेतों के लिए ही सुरक्षित रखना चाहते थे।

फसलें नहीं लोगों के हृदय सूख रहे थे। उनके भीतर बहनेवाला खून सूख रहा था। रग-रग में रहनेवाला पानी सूख रहा था। जिनके खेतों में बालियाँ आ गईं थीं वे मरे-मरे दाने की आस में सही पर खेतों में बने रहे। पर जिन्होंने देर से फसलें बोईं थीं उनकी फसलें बिना बालियों के ही मुरझा रही थीं। बहुतों के आलुओं में अभी मिट्टी भी नहीं चढ़ी थी कि वे सूखने लगे थे। मटर और दूसरी फसलों का भी यही हाल था। सारी फसलें नष्ट हो रहीं थी और ज्यादा से ज्यादा उनका उपयोग यही किया जा सकता था कि उन्हें काट कर जानवरों को खिला दिया जाय।

मगन के खेत अभी भी हरे-भरे थे। लोगों में भयानक असंतोष था। अब उनका यह डर भी खतम हो गया था कि मगन पानी नहीं देगा तो वे क्या करेंगे। वे अपने को ठगा गया महसूस कर रहे थे कि अगर फसलों का यही हाल होना था तो गहने और जमीनें रेहन रखने या घर में बचा कर रखी गई थोड़ी बहुत जमा पूँजी को भी मगन को सौंप आने का क्या मतलब था। यह सरासर लूट थी। यह पहली बार था कि कई लोग गुस्से में खुलेआम मगन के नाम गाली बक रहे थे। गुस्सा डर पर शायद पहली बार हावी हुआ था। लोग गुस्से से जल रहे थे। और वे कुछ भी कर गुजरने को तैयार थे।

इसका पहला संकेत तब मिला जब मगन की आलू की फसल में कई बिस्वे की फसल खोद ली गई। पहले शायद ही कोई ऐसा करने की हिम्मत कर पाता। पर ये तो कुछ भी नहीं था। एक रात मगन की गेहूँ की करीब दस बारह बीघे की तैयार फसल में आग लग गई। पूरा का पूरा खेत कुछ ही पलों में जल कर राख हो गया।

यह पता नहीं चल पाया कि यह जान-बूझ कर लगाई गई आग थी या फिर किसी की चिलम या बीड़ी से फैली थी। पर अगर यह जान-बूझ कर लगाई गई आग थी तो यह धरती से हुए उस सदियों पुराने समझौते का खुला उल्लंघन थी। फसल लूट ली गई होती तब शायद धरती को खुशी ही होती पर जलाए जाने से... अगले कुछ दिनों में लोगों ने देखा कि धरती की छाती फट ही गई थी सचमुच।

यह दरार गाँव के बीचोंबीच प्रकट हुई थी जो कम से कम एक बाँस गहरी थी और कोस भर लंबी थी। इसी के साथ कई लोगों के घरों की दीवालों में भी दरार पड़ गई थी। यही हाल फर्श का भी था जो कि जाहिर ही है कि कच्चा ही था। लोगों ने अपने घरों के भीतरे हिस्से की दरार को भरना चाहा। इस क्रम में जब भीतर पानी गया तो भीतर से धुएँ

जैसा कुछ निकला। लोग डर गए कि धरती के सीने में आग लगी हुई है। पर आग बुझाने के लिए अगर कहीं पानी था तो वो धरती के भीतर ही था। सो ज्यादातर लोगों ने इसे मिट्टी को कूट-कूट कर पाटने की कोशिश की पर दूसरे-तीसरे दिन तक दरार फिर जैसी की तैसी दिखाई पड़ती।

ये सब हम पर आनेवाली विपदाओं के संकेत मात्र थे। अब तक हर किसी को दिखने लगा था कि कुछ बहुत बुरा होने वाला है। पर क्यों? आखिर क्यों? इस सवाल का जवाब किसी को पता नहीं था। अंदाजे थे पर वे एक-दूसरे से इतने अलग थे कि उनके बीच का कोई संभावित बिंदु तय कर पाना लगभग असंभव था। और सच्चाई उस बिंदु पर थी या कि सारे अनुमानों अंदाजों के बाहर थी कहीं, इस बारे में जाननेवाला कोई नहीं था।

बारिश का मौसम बीता जा रहा था। सारे आर्द्रा, मघा, कुख्य, पूर्वा, उत्तरा, सरेखा बीते जा रहे थे। वे एक-एक कर आ और जा रहे थे पर उनके पास हमारे लिए पानी नहीं था। एक बूँद भी नहीं। आसमान में बादल क्या बादल की पूँछ भी कहीं दिखाई नहीं पड़ रही थी। आसमान इतने भयावह ढंग से नीला दिखता कि हमें झुरझुरी आती। जिसकी नीली आँच में हम सब जलने लगते।

गर्मी का मौसम जाने का नाम ही नहीं ले रहा था। गर्मी हमारे शरीरों की सारी नमी सोखे ले रही थी। ऐसी गर्मी हमने पहले कभी नहीं देखी थी। हमारे पसीने हमारे जिस्मों में ही सूख कर बिला जा रहे थे। सुबह से शाम तक रात से शाम तक गर्मी का साम्राज्य फैला था। गर्मी से जैसे एक सनसनाहट की आवाज आती। कुछ-कुछ अदहन के उबलने जैसी। गर्मी क्या पकानेवाली थी आखिर!

आसपास के जंगलों में रहनेवाले जानवर सियार, नीलगाय, लोमड़ी, खरगोश पानी की तलाश में इधर-उधर भटकते हुए अक्सर दिख जाते। मौसम ने उनका सदियों से सिरजा यह अभ्यास कि आबादी के इलाके में न जाया जाय नष्ट कर दिया था।

कई कुएँ सूख गए थे। कई कुओं से पानी के साथ कीचड़ आ रहा था। गाँव में दो तीन कुएँ ही ऐसे बचे थे जिनमें अभी भी साफ पानी था। ऐसे में पंडिताने के लोगों को एक ऐसे कुएँ की याद आई जिसमें से सालोंसाल से किसी ने पानी नहीं निकाला था। बीसों साल पहले जब बच्चा पंडित की बेटी किसी पटेल लड़के के साथ भाग गई थी तो बच्चा ने इसे कुएँ में कूद कर प्राण त्यागे थे। तब से यह भुतहा कुँआ हो गया था। जिनकी लड़कियाँ बड़ी होने लगतीं उनके बाप इस भुतहे कुएँ पर आते और अपनी इज्जतबख्शी की गुहार लगाते। इसके बावजूद किसी लड़की का पेट फूल ही जाता तो

लड़की के बाप की जगह कई बार लड़कियाँ खुद ही डूब मरतीं। समय बच्चा पंडित से आगे बढ़ गया था।

इसी कुएँ को भूतमुक्त कराने के लिए शिवराम पंडित ने कुछ पूजा पाठ और अनुष्ठान वगैरह कराया। इस अवसर पर गरुड़ पुराण से ले कर तोता-मैना तक के किस्सों का पाठ किया गया। पानी में एक शीशी गंगाजल और एक लोटा गौमूत्र डाला गया और पानी को पीने लायक घोषित कर दिया गया। इस कुएँ का पानी भी खत्म न हो जाए इस लिए यह तय किया गया कि जब तक बारिश नहीं हो जाती और सभी कुओं में फिर से पानी नहीं आ जाता तब तक इस कुएँ का पानी सिंचाई वगैरह के काम में नहीं लाया जाएगा। हालाँकि कुछ लोगों का कहना था कि इसमें कम से कम सात हाथियों के डूबने भर का पानी है पर ऐसे लोगों की बात नहीं सुनी गई।

इसके पहले दो दिन तक कुएँ का पानी पुर से निकाला गया। पानी में इतनी बदबू थी की पुरा गाँव गंधाने लगा। तब भी पानी कम नहीं हुआ तो किराए पर एक उठल्लू इंजन लाया गया जो लगातार दिन भर पानी खींचता रहा। इस पानी को कुछ लोगों ने नाली वगैरह बना कर एक गड़ही में ले जाने की कोशिश की पर सारा का सारा पानी उस मीलों लंबी दरार में समा गया जो धरती की छाती पर उभरी हुई थी। इस दरार से इतना धुआँ निकला कि पूरे गाँव के आसमान पर फैल गया। यह अजीब तरह का धुएँ का बादल कई दिनों तक आसमान में छाया रहा और फिर धीरे-धीरे करके गायब हो गया। दरार जो लोगों ने कई जगहों से पाट रखी थी वह और चौड़ी हो कर फिर से उभर आई थी।

पर स्थिति और भी भयानक होने की तरफ बढ़ रही थी। सिर्फ तीन कुओं में पानी बचा था। जिनसे पूरे गाँव का काम चल रहा था। एक तो मगन का कुआँ था जिससे ठकुराने को छोड़ कर पूरे गाँव को कोई मतलब नहीं था। बाकी दो कुएँ वहाँ थे जहाँ से पानी लेने में ठाकुरों और पंडितों को तो क्या पटेलों तक को दिक्कत हो रही थी। बाकी दोनों नीच कही जानेवाली जातियों के थे।

ऐसे में पटेलों ने कुछ कुओं को और गहरा करने का निश्चय किया। सबसे पहले इस काम के लिए दुलारे पटेल का कुआँ चुना गया। जो सभी के लिए लगभग समान रूप से सुविधाजनक था। दूसरे वह पटेलों के बीच का ऐसा एकमात्र कुआँ था जिसकी जगत पक्की थी। इसी कुएँ में एक दिन बाल्टी तसला और फावड़ा ले कर दो लोग नीचे उतरे। बाहर हड्डाए बैलों के सहारे दो लोग तैयार थे जो मोट के सहारे भीतर का कीचड़ और मिट्टी बाहर निकालनेवाले थे। नीचे उतरनेवाले लोगों ने अभी काम शुरू भी नहीं

किया था कि चक्कर खा कर वहीं गिर पड़े। अंदर की हवा विषैली थी इस बात को जाने समझे बगैर बाहर मौजूद लोगों में से दो लोग सरपट कुएँ में उतर गए। पल भर में वे भी वहीं गिर गए। कुएँ में रस्सियाँ लटकी हुई थीं पर उनको इतना समय ही नहीं मिला कि वह इन रस्सियों का उपयोग कर पाते।

लोग समझ ही नहीं पा रहे थे कि अंदर जाते ही इन लोगों को क्या हो जा रहा है। कुएँ में विषैली गैस निकलने की बात अब तक गाँव में किसी ने नहीं सुनी थी। आखिरकार एक और जवान तैयार हुआ कुएँ में उतरने के लिए पर पूरी एहतियात के साथ। उसकी कमर में एक मजबूत रस्सी बाँधी गई कि वह अगर खुद न आ सके तो उसी रस्सी के सहारे उसे झटपट ऊपर खींच लिया जाय। वह अभी कायदे से नीचे पहुँच भी नहीं पाया था कि उसे गश आ गया। लोग कुएँ में झाँक रहे थे। उसे तुरंत ऊपर खींच लिया गया। वह बेहोश था।

बहुत देर बाद जब उसे होश आया तो वह बहुत ही कमजोरी महसूस कर रहा था। उसकी आँखों में भय था। बहुत धीरे-धीरे बोलते हुए और लगभग हाँफते हुए उसने बताया कि भीतर जाते ही उसे ऐसा लगा जैसे उसकी नाक और मुँह किसी ने दबा लिया हो। वह साँस भी नहीं ले पा रहा था। बाद में उसने यह भी जोड़ा कि उससे पहले कुएँ में उतरे चारों लोग उसे नीचे बुला रहे थे। उन सबके मुँह खुले थे और आँखें भी। वह बेहद डर गया था और शायद डर के मारे ही बेहोश हो गया था।

लोग दिन भर लाशों को निकालने की जुगत करते रहे पर नहीं निकाल पाए। चारों में तीन ने सूती कपड़े की जाँघिया पहन रखी थी। और एक ने धोती का एक टुकड़ा पहना रखा था। बाकी वे नंगे बदन थे। कटिया सबसे पहले धोती में ही फँसी थी और खींचने की कोशिश में धोती को चीरती चली आई थी। कई बार की कोशिश के बाद धोती बाहर आ गई थी और धोतीवाला आदमी कुएँ में नंगा पड़ा था। जाँघियावालों की डोरियाँ टूट गई थी। इस कोशिश में उनके शरीर क्षत-विक्षत हो रहे थे। ऊपर से कुएँ के आस पास लगातार बने रहनेवाले लोग भी अजीब-सी कमजोरी और सुस्ती महसूस कर रहे थे। कोई चारा न देख कर कोशिश बंद कर दी गई।

लोग रात भर कुएँ के चारों ओर डेरा जमाए पड़े रहे। मरे हुओं को अकेला तो नहीं छोड़ा जा सकता था। अगले दिन पुलिस आई। उसने गाँववालों पर भरपूर दबाव डाला, दो-चार को दो-चार डंडे भी लगाए पर कोई भी कुएँ में उतरने को तैयार नहीं हुआ। बहुत डराया-धमकाया पर कुछ नतीजा निकलता न देख और लाशें निकालने का कोई तरीका न मिलता देख उसे धमकाने लगे जिसका कि कुआँ था। गाली बकी कुछ वसूला

और कुएँ को पाटने और किसी को कानोंकान खबर न लगने की हिदायत देते हुए जाने को तैयार हुए।

यह कैसे हो सकता था। यह भयानक था। आदमी औरतें दो दिन से चिल्लाते-चिल्लाते पहले से ही बेदम हो चुके थे। फिर भी उनके विलाप से एकाध पुलिसवालों तक की आँखे नम हो गईं।

तब पुलिसवालों ने एक दो लोगों को दूर ले जा कर समझाया कि कुएँ में जरूर कोई विषैली गैस है। लाश निकालने के लिए बाहर से ऐसे लोगों को बुलाना पड़ेगा जिनको ऐसे काम करने की ट्रेनिंग हो। इसमें कई दिन लग सकता है। तब तक लाशें सड़ने लगेंगी। गाँव में बदबू फैलेगी, बीमारी फैलेगी। ऐसे में सबसे सही तरीका है कि कुएँ को ऐसे ही पाट दिया जाय।

यह अनहोनी बात थी पर कई लोगों को समझ में भी आने लगी थी। पर बिना जलाए...? तय पाया गया कि कुएँ में ऊपर से सूखी लकड़ियाँ डाल कर जला दिया जाय। लकड़ियों की कोई कमी नहीं थी। कुएँ में ढेर सारी लकड़ियाँ डाली गईं। पर जब लकड़ियों में आग लगाने की कोशिश की गई तो आग लगी ही नहीं बल्कि आग अंदर जाते ही बुझ जा रही थी। तब घी या तेल की तलाश हुई। जितना भी घी-तेल मिला सब के सब कुएँ में डाल दिया गया। फिर भी आग नहीं पकड़ पाई। तब कोई एक शीशी मिट्टी का तेल ले आया। ऊपर से तेल डाला गया फिर एक कपड़े को मिट्टी के तेल में भिगो कर भीतर डाला गया। भीतर जाते ही कपड़े की आग भी बुझ गई।

ये गाँववालों के लिए और भी भयानक था कि आग उन बदनसीब लाशों को जलाने से मना कर दे रही थी। ये बिल्कुल अनदेखी अनहोनी बात थी। बहुतेरे काँप-से रहे थे। उनकी आँखों में अचरज और भय था। आग का ये स्वभावविरुद्ध आचरण अभी और भी भयानक अनिष्ट की तरफ इशारा कर रहा था। आखिरकार उन्होंने कुएँ को मिट्टी से पाटना शुरू कर दिया। कुएँ की छूहियाँ तोड़ कर उसी कुएँ में ढहा दी गईं। और अगले दिन तक कुआँ पूरी तरह से पाट दिया गया। इस बार शिवराम पंडित के पड़ोसी अनिल कुमार मिश्रा आगे आए। उनके हिसाब से वैसे तो यह महाबाभन का काम था पर गाँव की सुख-शांति के लिए वे यह भी करने को तैयार थे। उन्होंने मृतक आत्माओं की शांति के लिए हवन वगैरह करवाया और बाकायदा तेरह दिन बाद विधिवत तेरही करने की सलाह दी। कुएँ की जगह पर अनिल मिश्रा की सलाह पर एक पीपल का पेड़ लगा दिया गया।

आगामी संकट का अनुमान कर लोग बिलबिला उठे थे। बहुतेरे घरों में भोजन सिर्फ एक जून पकने लगा। वह भी पूरी कंजूसी के साथ। होनेवाली शादियाँ भले मौसमों के इंतजार में टाल दी गईं। जो लोग जवान थे या बाहर जा सकते थे उन्हें बाहर कमाने के लिए भेज दिया गया। वे बाहर जा कर कुछ इस तरह से गुम हो गए जैसे कभी थे ही नहीं। इस तरह से गाँव की अर्थव्यवस्था का बोझ कुछ कम करने की कोशिशें हुईं। बाकी आदमी हो या औरत लोग बेइंतिहा खाली हो गए थे। उनके पास करने को वैसे भी बहुत कम काम थे पर जो काम थे भी उनसे भी उन्होंने मुँह मोड़ लिया था। गाँव में ज्यादातर लोगों के घर-दुआर साफ-सुथरे रहा करते थे। वहाँ अब मक्खियाँ भिनभिनातीं रहतीं। दुआरे पर कूड़ा बिखरा रहता पर जल्दी कोई इस तरह की बातों की सुधि नहीं लेता था।

ऐसे में एक सुबह जब हम सो कर उठे तो गाँव के लगभग हर घर में गेरू लगे पंजे के निशान लगे हुए थे। घर के चारों तरफ। पूरा गाँव कुछ इस तरह से लग रहा था जैसे हर घर में कुछ विवाह वगैरह हो कर गुजरा हो। ये निशान शादीवाले घरों में ही देखे जाते थे। और मंडप के किसी एक बाँस की तरह शुभ चिह्न के बतौर कम से कम साल भर के लिए छोड़ दिए जाते थे।

पर इस बार ये बतौर शुभ चिह्न नहीं प्रकट हुए थे बल्कि इसके पीछे एक सामूहिक डर था। अनिष्ट की आशंका थी। हवा में कई दिनों से फैला आतंक था कि कोई महामाई है जो किसी भी दरवाजे पर किसी भी रात प्रकट हो सकती है। जो खाने के लिए प्याज के साथ बासी रोटी माँगती है। उसे रोटी दो तो भी अनिष्ट करती है और न दो तो भी। उससे बचने का बस यही एक तरीका था कि घर के चारों तरफ गेरू लगे पंजों से नाकेबंदी कर दी जाय। यही तरीका बताया था गाँव के युवा पंडित अनिल कुमार मिश्रा ने। इसके बावजूद लोग आतंक में ही जीते रहे। बहुतेरे लोगों ने महामाई को जमुना की माँ को घर में ही जलाने से जोड़ा और यहीं से एक नया किस्सा पैदा हुआ कि जमुना ने अपनी माँ को जिंदा ही जला दिया था। इसी लिए वह बूढ़ी औरत महामाई के रूप में प्रकट हुई है।

एक दहशत थी जो यहाँ से वहाँ तक हवा में व्याप गई थी। रात के समय एक पत्ता भी हिलता तो लोग काँप-काँप जाते। अपने को बहुत हिम्मतवर लगानेवाले लोगों ने भी रात में अकेले बाहर निकलना बंद कर दिया था। लोग निकलते भी तो कोई लोहे की छुरी या बल्लम आदि ले कर चलते। लोगों में एक परंपरागत भरोसा था कि पास में धारदार लोहा रहने पर कोई भी भूत या चुड़ैल पास आने की हिम्मत नहीं करेगा।

जो थोड़ी हिम्मत रखनेवाले लोग थे वे महामाई का बाल काट कर कहीं छुपा देने का सपना देख रहे थे। किस्सा यह था कि बाल काट कर रख लेने के बाद चुड़ैल बाल काटनेवाले व्यक्ति की गुलाम हो जाती है और उससे मनचाहा काम करवाया जा सकता है। उससे कुआँ भी खुदवाया जा सकता है। तब तक, जब तक कि कुएँ में पानी न निकल आए।

कई लोगों ने महामाई को देखने का दावा किया और तुरंत बीमार पड़ गए। जबकि रोटियाँ वैसे भी इतनी कम बनती थीं कि बासी बचने का सवाल ही नहीं उठता था। प्याज जरूर रहती हमेशा घरों में पर वह किसी कीमती सामान की तरह छुपा दी गई। पर महामाई का आतंक जस का तस बना रहा। इस मुश्किल समय में ओझा लोगों के लिए नए सिरे से रोजगार प्रकट हुआ। पंडितों ने भी महामाई से मुक्ति के लिए अनुष्ठान वगैरह का जिम्मा लिया।

महामाई का तो कुछ नहीं हुआ पर हमारे बीच झगड़े बढ़ गए। कहीं किसी के घर के सामने पानी और फूल के साथ रंग-रोगन किया हुआ अंडा कटा मिलता तो कहीं नीबू। मुर्गे और बकरे भी कटे... उनके कटे सिर अक्सर सुबह-सुबह रास्तों पर मिलते और दहशत पैदा करते। टोने-टोटके के लिए सोते समय लोगों के बाल काट लिए जाते। अगले दिन किसी दूसरे को अपने आँगन में कटे हुए बालों का गुच्छा मिलता जिन पर खून लगा होता। मजबूरन उसे भी किसी ओझा या पंडित की शरण में जाना पड़ता।

यह श्रृंखला टूटने का नाम ही न लेती।

हम अभी भी आदतन अपने जानवरों को बकुलाही के बीहड़ों की तरफ हाँक ले जाते थे। पर मुश्किल यह थी कि हरियाली वहाँ भी नहीं बची थी। आसपास के गाँवों के लोग भी कई बार वहीं पर आ जाते थे। ऐसे में कहीं पर थोड़ी भी नमी बरकरार थी या कहीं सूखी ही सही पर घासें दिख जाती तो उसको ले कर झगड़ा शुरू हो जाता। कई दिन मार पीट हो चुकी थी। और कई बार एक गाँव से दूसरे गाँव के बीच लाठियाँ चलते-चलते रह गईं थीं।

हम पानी के लिए कुओं के पास जाते तो कई बार वे हमें गंदा पानी देते। और कई बार तो पानी देने से ही मना कर देते। कुओं ने हमें कभी निराश नहीं किया था। यह हमारे

लिए अविश्वसनीय था... हम इस पर भरोसा नहीं कर पाते। हम इस बात को कुओं का मजाक मानते और अगले दिन फिर से उनके पास जाते। इस तरह कई-कई दिन में जा कर हमें यह समझ में आता कि कुएँ हमसे मजाक नहीं कर रहे हैं। वह सच में हमारी प्यास नहीं बुझा सकते। वे खुद ही प्यास से तड़प रहे हैं।

हालत यह थी कि इलाके के सारे पेड़ों की पत्तियाँ बकरियाँ और जानवर खा गए थे। इन दिनों पत्तियाँ बकरियों का ही नहीं सभी जानवरों का एकमात्र आहार बची थीं। ऐसे पेड़ बड़ी मुश्किल से दिखाई पड़ते थे जिनमें पत्तियाँ या नरम टहनियाँ दिखती हों। एक-एक दिन में दसियों पेड़ ठूँठ हो जाते। उनका हरा-भरा वैभव गायब हो जाता। पहले सिर्फ बकरियोंवाले लोग ही कटवाँसे ले कर निकलते। पर अब हर किसी के पास एक कटवाँसा होता... टहनियाँ काटने और पत्तियाँ तोड़ने के लिए। हम इस बात के लिए पेड़ों से माफी माँगते। हमें इन पेड़ों के लिए मलाल था पर हम यह भी जानते थे कि वे हमसे ज्यादा मजबूत हैं यह सब झेलने के लिए। उनकी जड़ें गहरी हैं। एक बार बारिश आने भर की देर है कि ये पेड़ फिर से पत्तियों से भर जाएँगे। चिड़ियाँ फिर से घोंसले बनाएँगी। मधुमक्खियाँ छत्ते लगाएँगी।

हमारे खेल खतम होने लगे। हमारे खेलने की एक जगह तो पानी ही हुआ करता। पानी खतम सो पानी के खेल खतम। एक पूरी की पूरी पीढ़ी पानी आने तक तैरने से वंचित हो गई। जानवर कनकने होने लगे, साथ साथ हम भी। वे घास और पानी की तलाश में बेदम होने तक यहाँ से वहाँ भटकते। उनके पीछे-पीछे हमें भी भटकना पड़ता। हम भी चिड़चिड़े होने लगे। कई बार जानवरों को बिना बात ही मार बैठते। हमारे बीच आपस में भी झगड़े बढ़ गए थे। ये अलग बात है कि तब भी हम दोस्ती के पुराने अभ्यासवश जल्दी से सुलह कर लेते और फिर कभी न लड़ने की कसमें खाते। इसके बावजूद झगड़े रुकने का नाम न लेते।

बात कुछ नहीं थी पर एक दिन मेरी कायदे से पिटाई हो गई। मैं मगन के जानवरों को पानी पिला रहा था। कि गाँव के ही नागालैंड ने मगन के जानवरों को पीटते हुए दूर खदेड़ दिया। और अपने पुरवे के जानवरों को ले कर पानी में घुस गया। मैंने उससे पूछा तो उसने कहा कि कौन से तेरे जानवर हैं... मरते हैं तो मरें तुझे क्या। पर मुझे था कुछ। मैं रोज उन जानवरों के साथ दिन भर बिताता था। और कोई उन्हें बेवजह मारे ये मुझे कैसे बर्दाश्त हो सकता था।

मैं जानवरों को दुबारा उसी गड्ढे में हाँक लाया। नागालैंड ने फिर मगन के जानवरों को फिर मारना-खदेड़ना शुरू किया। बदले में मैंने नागालैंड के जानवरों को मारा। फिर तो

नागालैंड और उसके पुरवे के दूसरे कई लोगों ने मिल कर मुझे जी भर कर मारा और बोले, 'साले मगन के तलवे चाटे तू और तेरा बाप। हम क्यों डरें उससे। साले ने तालाब नहीं पटवाया होता तो जानवरों को पानी के लिए तरसना पड़ता... अब पानी पर न उसका कोई हक होना चाहिए न उसके जानवरों का।'

मेरी भरपूर पिटाई के बाद कई लोग आगे आए जिन्होंने मुझे छुड़ाया।

इसके बाद जानवरों को चराने का काम मैंने छोड़ दिया। यह कहते हुए कि चराने के लिए कहीं पर कुछ बचा ही नहीं है। अपने पिटने की बात मैंने मगन को नहीं बताई थी। न ही उसके जानवरों के पिटने की बात। घर आ कर काका को जरूर बताया था उस दिन। काका ने ही मना कर दिया था।

काका अभी भी मगन के यहाँ जाते थे। और मगन के यहाँ जानवरों के सानी-पानी-गोबर के अलावा और भी तरह तरह के काम करते थे। और वे करना भी चाहते तो क्या करते।

आदमी-औरतें कई बार घास की तलाश में निकल जाते और दिन-दिन भर भटकते रहते। और तब भी अकसर खाली हाथ ही लौटते।

ऐसे में हम अपने जानवरों को संतोष चराने ले जाते थे।

जब संतोष भी नहीं बचा तो हमने अपने जानवरों को आजाद करना शुरू कर दिया। हम जानते थे कि वे मरेंगे पर हम यह कभी नहीं चाहते थे कि वे हमारे दरवाजे मरें। ये हमारी आशाओं को पूरी तरह से खत्म कर देनेवाली बात होती। वे लगातार हमारी ओर ताकते और हम उनसे नजरें न मिला पाते। भूख-प्यास से बेहाल उन हड्डाए जानवरों में हमें अपना ही चेहरा दिखाई पड़ता। हमने अपने को उनके इतना नजदीक इसके पहले कभी नहीं महसूस किया था।

हम उन्हें आजाद कर रहे थे और वे थे कि बार-बार हमारे ही दरवाजे पर लौट आते। आजादी हो सकता है कि उनका कभी सपना रही हो... हरियाली पसरी होती चारों तरफ तो उन आँखों को ये सपना अच्छा भी लगता। पर इस समय उनका ये सपना उनसे ही बर्दाश्त नहीं हो रहा था। घर से दूर जाते ही उन पर दिन में ही सियार और भेड़िए टूट पड़ते। अक्सर वे वहीं गिर जाते। उनके भीतर प्रतिरोध की ताकत न बची होती। जो दूर होते वे चिल्लाते हुए घर की तरफ भागते। जो कि अब कहीं नहीं बचा था।

सियार कई लोगों को काट चुके थे। हम अकाल और भूख से ही नहीं रैबीज से भी मर रहे थे। और भी तमाम अजीब-अजीब बीमारियाँ हममें घर कर रही थीं। कुछ भी पहले जैसा नहीं था। बीमारियाँ भी। हमारे आसपास की चिड़ियाँ न जाने कहाँ गुम हो गई थीं। हम कई-कई दिन तक चिड़ियों की आवाज सुनने के लिए तरसते रहते। कभी कहीं कोई टी-टुहुक सुनाई दे जाती तो जैसे वह जीने की उम्मीद को बढ़ा जाती।

जमीन में जगह-जगह दरारें फट रही थीं। उन दरारों में ऐसे-ऐसे कीड़े-मकोड़े दिखाई पड़ रहे थे जिनको हमने तो क्या गाँव के पुरखे-पुरनियों तक किसी ने नहीं देखा था। पता नहीं वे पहले से ही धरती में ही रहते थे और अब बाहर निकल आए थे कि कहीं बाहर से आ कर हम पर धावा बोल रहे थे।

पानी इस समय हमारा सबसे बड़ा सपना था। हमारी चमड़ी सूख गई थी। आँखों की नमी सूख गई थी। अकाल हमारे भीतर को भी अपनी गिरफ्त में ले चुका था। कोई हमारे भीतर झाँक कर देखता तो पाता कि धरती की तरह ही हमारे भीतर भी दरारें ही दरारें थीं और उन दरारों में तमाम अनपहचाने कीड़े-मकोड़े घूम रहे थे।

इन दिनों पानी जिस कुएँ से आ रहा था उसका पानी पीते हुए हममें से ज्यादातर को उल्टी आती। आज उसी के पानी के लिए हम मिन्नतें कर रहे थे। हमीं नहीं ठाकुरों और पंडितों का भी यही हाल था। सिर्फ दो कुओं में पानी बचा था। एक वही भुतहा कुआँ जिसमें कभी बच्चा पंडित का भूत रहा करता था दूसरा गाँव के सबसे दक्खिन का कुआँ। भुतहे कुएँ तक हमारी पहुँच नहीं थी। हम उसी दक्खिनवाले कुएँ से पानी लाते थे। उसमें भी अब गंदा पानी आ रहा था और यह गंदा पानी भी हमें इतना कम मिल रहा था कि वह हमारे लिए तो क्या एक नन्हीं गौरैया के लिए भी कम पड़ जाता।

अकाल को ले कर तरह-तरह के किस्से आम थे। लोग यहाँ तक दावा करने के लिए तैयार बैठे थे कि फला-फला इलाके में तो लोग अपने बच्चों तक को खा रहे हैं। या उनके अड़ोसी-पड़ोसी ही मौका लगते ही उन्हें खा जा रहे हैं। हममें से ज्यादातर ने ऐसी चीजों पर कभी यकीन नहीं किया। ये ऐसी बातें थी जिन पर यकीन कर लेने के बाद जीने और मर जाने का भेद सदा के लिए समाप्त हो जानेवाला था।

आखिरकार वह समय आया जब हममें से ज्यादातर के यहाँ खाने को लगभग कुछ भी नहीं बचा था। पेड़ों में नरम पत्तियाँ तक नहीं थीं। हम भाग जाते पर ऐसी कोई जगह नहीं थी जहाँ हम भाग कर जाते। हमें यह भी तो नहीं पता था कि कितनी दूर जाने पर हमें एक चुल्लू पानी और रोटी का एक टुकड़ा मिल सकेगा... कि कितनी दूर जाने पर

ये सूखा खत्म हो जाएगा हमारे लिए। या फिर हम जैसों के लिए ये कभी खत्म होगा भी कि नहीं!

महामाई का मामला चल ही रहा था कि मुँहनोचवा प्रकट हो गया। जो रात के अँधेरे में तेज चमकीली रोशनी के साथ प्रकट होता था और झपट्टा मार कर चला जाता था। अगले दिन लोगों के क्षत-विक्षत शरीर कुछ इस तरह से मिलते थे कि जैसे उन्हें किसी दरिंदे ने फाड़ खाया हो। किसी ने भी उसे देखा नहीं था पर उसके होने की अफवाहें सब तरफ थीं। महामाई तो सिर्फ बीमार ही करती थी यह तो सीधे मौत थी।

न बर्दाश्त होनेवाली गर्मी के बावजूद लोगों ने घरों के भीतर सोना शुरू कर दिया। वे रात में पेशाब करने के लिए भी बाहर न निकलते। पर इससे भी भयानक बात थी कि इस डर ने हमसे हमारी सामूहिकता भी छीन ली। पहले जरा-सी भी आहट होती तो लोग बड़ी तादाद में लाठियाँ ले कर निकल आते। अब मुँहनोचवा ने उनके पैरों में पहाड़ बाँध दिया था। उन्हें लगता कि पता नहीं कहाँ वह घात लगाए बैठा हो। कोई निकलना भी चाहता तो उसके घरवाले आड़े आ जाते। हमारा गाँव अभी तक बचा हुआ था पर आसपास के गाँवों में ऐसी कई मौतें हम देख आए थे।

पुलिस आती और चुपचाप जला देने की सलाह देती। कभी-कभार चीर-फाड़ के लिए अपने साथ उठा ले जाती। लोग इस बात से और ज्यादा डरते। पहले से ही चिथड़े-चिथड़े हुई मिट्टी की और ज्यादा दुर्गति हमसे बर्दाश्त न होती। हम पुलिस के आने का इंतजार किए बगैर मिट्टी को ठिकाने लगा देते। कभी पुलिस आती तो लोगों का सामूहिक बयान यही होता कि मरनेवाला कहीं भाग गया है या कि कहीं कमाने चला गया है। पर पुलिस तब भी कुछ न कुछ नोचना-खसोटना चाहती। सूखे और मगन से जो कुछ बचा था वह पुलिस ले जा रही थी।

और तभी हमने ऐसे घरों को लूटने की सोची जहाँ रोटी का एक टुकड़ा मिलने की उम्मीद हो सकती थी। इसमें मगन ठाकुर का पहला ही नाम था। जमुना का बेटा आशाराम बहुत दिनों से मगन से अपना बदला पूरा करना चाहता था। वह इस बात को कभी भी भूल नहीं पाया था कि निरपराध ही उसे डकैती के आरोप में अंदर करवा दिया गया था। तब से वह लगातार जेल आता जाता रहा था। उसका जीवन पूरी तरह से बदल गया था। न जाने कितनी गालियाँ, कितनी लाठियाँ, कितनी बुरी स्थितियाँ उसके भीतर थीं जो उससे हिसाब माँग रही थी। और वह यह हिसाब मगन से मिल कर पूरा करना चाहता था।

उसने गाँव और गाँव के बाहर कई लड़कों के साथ मिल कर अपना एक गिरोह बना लिया था। और एक दिन उसने मुझे भी अपने गिरोह में शामिल होने का न्यौता दिया। कारण एकदम साफ था। ठकुराने या पंडिताने के लोगों के अलावा बहुत ही कम लोग रहे होंगे जो मगन के घर की भीतरी बनावट के बारे में कुछ जानते थे। मैं वहाँ लगभग रोज आता जाता था और घर के जर्रे-जर्रे से वाकिफ था। मैं बहुत ही आसानी से तैयार हो गया। और कुछ बहुत मामूली तैयारियों के बाद हम अपने काम के लिए तैयार थे। पर यह आशाराम था जो मगन के साथ खेलना चाहता था पहले कुछ दिन। और इस सब के बीच मुँहनोचवा हमारे बहुत ही काम आनेवाला था।

मगन के घर में कुल सात लोग रहते थे। मगन, उनकी पत्नी, मगन की बूढ़ी माँ ठकुराइन, मगन का भानजा गुलाब सिंह, गुलाब सिंह की पत्नी और दो छोटे बच्चे। गुलाब मगन के ही यहाँ रह कर उनके सारे काम धाम देखता था।

एक दिन मगन मैदान में पायजामा खोल कर बैठे ही थे कि उन्हें अपने आगे करीब दस फुट ऊपर रोशनी दिखाई दी। वह आँखे फाड़े रोशनी देख ही रहे थे कि रोशनी गायब हो गई। उन्हें कुछ भी समझ में नहीं आया। वह और कुछ सोच-समझ पाते की उनके बाईं तरफ वही दृश्य फिर से घटा। वह नहीं समझ पाए कि आखिर उनके ठीक सामने इतनी ऊपर रोशनी कैसे हो रही है। वह टार्च जलानेवाले थे कि रुक गए। उन्हें लगा अभी तो वह अँधेरे में छुपे हुए हैं... टार्च जलाते ही उनका वहाँ होना प्रकट हो जाएगा। पर उस रोशनी ने तो उन्हें ऐसे भी देख ही लिया था। रोशनी अचानक ठीक उनके सिर पर प्रकट हुई और जब तक मगन कुछ समझ पाते एक विकराल पंजे ने उनके कंधे से मांस का एक बड़ा हिस्सा नोच लिया था। मगन के मुँह से हूहू जैसी आवाज निकली। उनकी पलट कर पीछे देखने की हिम्मत नहीं पड़ी। वह टार्च और पानी का डिब्बा वहीं छोड़ कर भागे। थोड़ा आगे ही बदहवासी में भागते हुए मगन का पैर किसी मेंड़ से टकराया और वे मुँह के बल गिरे। उन्हें लगा कि उनका पैर किसी ने थाम लिया है। वह दर्द से लगभग चिल्लाते और डकराते हुए वहीं बेहोश हो गए।

यह हमारा काम था। इसी के साथ तमाम जगहों पर दिखाई देनेवाला मुँहनोचवा यहाँ भी प्रकट हो गया था। आशाराम लोगों ने इस अफवाह का फायदा उठाया था कि कई जगहों पर ऊपर हवा में एक रोशनी कुछ इस तरह से दिखाई पड़ती है जैसे कुछ जल रहा हो और फिर यह रोशनी अचानक से गायब हो जाती है।

अगले दिन मगन की छत पर फिर से रोशनी दिखाई पड़ी। मगन ने बेटे के पास संदेश भिजवाया। जिस दिन बेटा आया था उसी दिन रात में अचानक पंप का इंजन तेज

आवाज के साथ धू-धू कर जल उठा। उसके कई टुकड़े दूर जा कर गिरे थे। आग इतनी तेज थी कि इंजन के कई हिस्से पिघल गए थे। पानी की टंकी वहीं बगल में ही थी। पर आग बुझाते-बुझाते इंजन लोहे का एक कुरूप कबाड़ भर हो कर रह गया था।

इधर जब सबका ध्यान पूरी तरह से इंजन पर था मगन के जानवरों के बाड़े पर मुँहनोचवा प्रकट हुआ आग की फुरहुरियाँ छोड़ता हुआ। बाद में गुलाब की पत्नी ने बताया कि उसकी दोनों आँखें लाल थीं और देखने भर से ही झुरझुरी पैदा हो रही थी। बरदवान कच्ची थी। उसका ठाठ भयानक रूप से सूखा था। वह कुछ इस तरह से भभक कर जल उठा जैसे उस पर मिट्टी का तेल छिड़क कर आग लगा दी गई हो। पंप की टंकी का पानी खत्म हो गया था। कुएँ में पानी था पर वह इतना नीचे था कि निकालने में बहुत समय लग रहा था।

यह मैं ही था जो जान पर खेल कर जानवरों के बाड़े में घुसा था और जानवरों को खुला छोड़ने लगा था। ऊपर से लकड़ी का एक जलता हुआ टुकड़ा मेरी पीठ पर गिरा था और उस हिस्से की चमड़ी को अपने साथ लेता गया था। पर जानवरों को जलते हुए देखना मेरे लिए लगभग असंभव बात थी। मेरा उनका पिछले कई सालों का साथ था और वे मगन के थे इस गुनाह पर उन्हें जलने नहीं दिया जा सकता था।

आग भी मैंने ही लगाई थी।

गाँव में ऐसे घर न के बराबर बचे थे जहाँ जानवर बचे हुए थे। हमारे ज्यादातर जानवर भूख और प्राणघातक प्यास के चलते दम तोड़ चुके थे। उनकी जीभें और आँखें बाहर निकल आई थीं और अपने लिए मौत माँगती-सी दिखती थीं। मौत मिली भी थी उन्हें। कइयों को पहले कभी न दिखनेवाली बीमारियों ने जकड़ लिया था। कइयों को भेड़ियों, सियारों और गिद्धों ने नोच खाया था। कई बार तो जिंदा ही।

मगन के जानवर हमारी आँखों में गड़ रहे थे।

दूसरे दिन मगन का भानजा गुलाब तीन-चार गाँव दूर से ओझा ले कर आया। ओझा ने पहले तो हाथ खड़ा कर दिया फिर काफी देर की मशक्कत और हाँ-ना के बाद वह दो दिन के बाद ओझाई के लिए तैयार हुआ। उसने तमाम जिंदा-मुर्दा सामग्रियों की लिस्ट गुलाब के हाथों में थमा दी। ओझा ने बताया कि यह उसी बुढ़िया का भूत है जिसे उसके घर में ही फूँक दिया गया था और उसके बाद से गाँव में जितने भी लोग मरे हैं वह सब उसी बुढ़िया के साथ होते गए हैं। ओझा ने बताया कि गाँव में जानवरों के भी तमाम भूत उड़ रहे हैं जो इसके पहले उसे कहीं नहीं दिखाई पड़े थे। तालाब पाटने

से भीटा पर के पहलवान वीर बाबा पहले से ही नाराज हैं। और भी बहुत सारे भूत हैं जो प्यास से पानी-पानी चिल्लाते हुए सब तरफ तैर रहे हैं।

ये सब ऐसी बातें थीं जिनसे किसी को भी एतराज नहीं हो सकता था। गाँव मसान बना हुआ था। गाँव के बाहर जानवरों की हड्डियाँ जहाँ-तहाँ बिखरी हुईं थीं। लोग जिंदा ही भूत दिखाई दे रहे थे। और वे भूख-प्यास से इतने हल्के और कमजोर हो गए थे कि सहज ही उनके चलने फिरने को तैरता हुआ माना जा सकता था।

ओझा वापस जाने के लिए गुलाब की राजदूत पर बैठने ही वाला था कि उसे लगा जैसे उसकी कमर पर किसी ने गर्म नश्तर चुभो दिया हो। यह एक बिच्छू था। जब तक ओझा की समझ में कुछ आता वह कई बार अपना काम कर चुका था। ओझा का हाथ कमर पर पहुँचा ही था कि हाथ को भी एक डंक का इनाम मिला। ओझा अपनी धोती उतार कर फेंकता हुआ भागा। उसने अपना कुर्ता फाड़ डाला और नंग-धड़ंग भागा।

इतना काफी था बल्कि काफी से ज्यादा था। पूरे गाँव में भयानक दहशत फैल गई थी। पूरे गाँव में दहशत फैलाना हमारा उद्देश्य नहीं था। पर इसके बिना हमारा काम चल भी नहीं सकता था। हम बस चार-पाँच थे। और हम लोगों ने अपने को गाँववालों से छुपा रखा था। हमारा उद्देश्य ठाकुरों से बदला लेना था और उन्हें लूटना भी कि हमारे पेट में भी कुछ जा सके और हम जिंदा रह सकें। असली लोग तो वही थे आशाराम और वही बिना बात के सताए गए लोग...। मैं तो उनके बीच यूँ ही शामिल हो गया था।

पर अब मुझे इस काम में मजा आने लगा था। इतना कि कई बार तो मुझे लगता कि मैं अकाल को ही भूल गया हूँ। मुझे पहली बार कोई जिम्मेदारी का काम मिला था। इस काम में एक गहरा रोमांच था। ऐसा रोमांच मैंने पहले कभी नहीं महसूस किया था।

हमारा काम हो गया था। अगले दिन मगन का बेटा वापस अपनी नौकरी पर चला गया था। उसने मगन और अपनी माँ से बहुत कहा कि वे उसके साथ चलें और मगन और उनकी पत्नी तो लगभग तैयार भी हो गए थे पर ठकुराइन नहीं मानीं तो नहीं मानीं। गुलाब की पत्नी कहा कि उन्हें उनके मायके छोड़ दिया जाय... और गुलाब अपनी राजदूत पर उनकी यह इच्छा पूरी करने चले गए।

रात मगन, उनकी पत्नी और ठकुराइन घर में अकेले थे। हमने मगन और उनकी पत्नी को बेहोश किया और चारपाई सहित उन्हें वहाँ रख आए जहाँ तालाब सबसे गहरा हुआ करता था।

उस रात हमने मगन के घर में शायद ही कुछ छोड़ा हो। अनाज, बर्तन, गहने, हथियार... सब कुछ। इसके बाद हमने घर में खूब तोड़-फोड़ मचाई। सभी बिस्तरों को इकट्ठा कर के उसमें आग लगा दिया। घर भर में जो भी कपड़ा या कोई जलने की चीज दिखी सब कुछ उसी आग में ला कर डाल दिया।

इसके पहले की आग की लपटें आसमान छुवें हमें यहाँ से भाग लेना था। हम निकल पाते उसके पहले हमें तेज आँच में लाल एक चेहरा दिखा जो हमें ही देख रहा था। आरपार। उन आँखों में पता नहीं ऐसा क्या था कि हम जो सब कुछ एक उत्सव की तरह से निपटा रहे थे जैसे जड़ हो गए। ठकुराइन को तो हम भूल ही गए थे।

हम चुपचाप वहाँ से चले आए। हम सबने अपने चेहरे पर कपड़े बाँध रखे थे। पर ठकुराइन की आँखों ने जिस तरह से मेरी तरफ देखा था, मुझे लगा कि वह मुझे पहचान गई हैं। उस घर में मेरा रोज का आना जाना था। पर ठकुराइन की आँखों में हमें पहचान लेने पर न कोई अचरज था, न कोई खुशी। उनका सब कुछ लूट लिया गया था, बाकी सब कुछ जल रहा था पर वहाँ उन आँखों में कोई भय या आतंक भी नहीं था। उनकी आँखों में एक खौफनाक तटस्थता थी। उसी तटस्थता से वे हमें भी देख रही थीं और अपने जलते हुए घर को भी। ठकुराइन जड़ में थीं सब चीजों की। तालाब का पट्टा उन्हीं के नाम हुआ था पर हम उन्हें जस का तस छोड़ कर चले आए।

यह सब पल भर में ही हुआ होगा।

हमने लूटी हुई चीजें कहीं छुपाईं। और अपने-अपने घरों में सोने चले गए। यह तो हमें अगले दिन ही पता चलना था कि उसी आग में ठकुराइन भी जल कर राख हो गईं थीं। हम सब जैसे राख हो गए थे। मगन का जो भी मामला रहा हो पर ठकुराइन जीवन भर उदार और भली रहीं थीं। उन्होंने कभी किसी का बुरा नहीं किया था बल्कि हारे-गाढ़े काम ही आई थीं। वह गाँव में इकलौती थीं जहाँ से कभी-कभी बिना ब्याज के भी पैसा मिल जाया करता था।

इसी के साथ पता नहीं कैसे हम संदिग्ध होते चले गए। इसके बाद परस्पर अविश्वास और लूटपाट का ऐसा दौर शुरू हुआ जिसकी हमने कल्पना भी नहीं की थी। हमारे भी घर लुटे। रोज किसी न किसी घर में कोई न कोई घुस जाता। यह सिर्फ और सिर्फ अन्न की तलाश थी... पानी की तलाश थी। यह तो हमने बाद में जाना कि इसमें ठाकुरों का बदला भी था, जब एक-एक कर के सभी आशाराम मार दिए गए।

दूसरी तरफ लूटे हुए माल का तब तक कोई मतलब नहीं था जब तक कि उसे हम अपने घरों में न ले जा पाते। हमें बताना ही पड़ा। हमारे घरों के लोग भूखे मर रहे थे। पर कई बड़े-बूढ़ों ने इस तरह के अन्न को खाने से मना कर दिया। वे पहले की तरह ही धीरे-धीरे मौत के मुँह में जाते रहे। हम उन्हें दफनाते रहे... जलाते रहे... वही गाँव के बाहर ताल और भीटे की जगह पर।

मगन इस बीच में सनक-से गए। उस दिन जब हम उन्हें तालाबवाली जगह पर चारपाई सहित छोड़ कर आए थे तब से उनका व्यवहार अजीबोगरीब हो चला था। यह उस अर्क का भी असर हो सकता था जो हमने उन्हें बेहोश करने के लिए सुँघाया था। पर उनकी पत्नी तो ठीकठाक थीं। खैर मगन एक दिन गायब हो गए। उनकी पत्नी अपने बेटे के साथ चली गईं। जो घर में डकैती और ठकुराइन के मरने की खबर सुन कर आया था और अभी तक रुका हुआ था।

आठ-दस दिन बाद पुलिस आई और करीब पंद्रह लोगों को डकैती के आरोप में गिरफ्तार कर के अपने साथ ले गई। आशाराम लोग पहले ही मार दिए गए थे। मैं बच गया था, शायद मेरे बारे में लोगों को पता नहीं चल पाया था। जो लोग पकड़ कर ले जाए गए उनके घरों के लोग बहुत ज्यादा दुखी नहीं थे। उन्हें लग रहा था कि हो सकता है कि उन्हें पुलिसवाले मारे-पीटे पर खाना-पानी भी तो मिलेगा पकड़े गए लोगों को।

जब मगन के यहाँ कोई नहीं बचा तो मगन का कुआँ भी सभी के लिए खुल गया। पर उसमें भी न के बराबर ही पानी था जो काले कीचड़ में मिल कर के आता था। हम उसे छानते, थिराते तब कहीं जा कर पीने लायक होता। वो भी दो बाल्टी निकालते ही पानी खतम हो जाता, कीचड़ भर बचता। कुएँ की तली में रिस-रिस कर दुबारा पानी जमा होने में घंटों लग जाते।

तभी वह वह हुआ जिसके बारे में कोई सोच भी नहीं सकता था। शिवराम पंडित ने घर के भीतर एक मराड़ में करीब दस-बारह बोरा अनाज छुपा रखा था। तो शिवराम ने एक दिन बिना किसी भी तरह के भेद की परवाह किए सभी गाँववालों को बुलाया और अपना सारा अनाज गाँव भर के लोगों में बाँट दिया। हम एक से एक असंभव चीजें देख ही नहीं रहे थे बल्कि उन्हें जी रहे थे फिर भी हमें इस पर भरोसा न हुआ। शिवराम ने गाँववालों से माफी माँगी कि पहले उन्हें यह सद्‌बुद्‌धि नहीं आई। कि जब गाँव ही खतम हो जाएगा तो वे खुद कहाँ जाएँगे। किससे खरीदेंगे, किसको बेचेंगे और बेच कर करेंगे भी क्या! कुदरत ने उन्हें आईना दिखा दिया है।

दूसरे उन्होंने गाँव के बचे हुए लोगों से गुजारिश की कि अब तक जो कुछ भी हुआ पर अब मिल-जुल कर रहें। मुसीबत किसी अकेले पर नहीं आई है। पूरे गाँव पर आई है बल्कि इलाके पर आई है। तो सब अलग-अलग क्यों लड़ रहे हैं इससे। मिल कर क्यों नहीं लड़ते। मिल कर क्यों नहीं काटते। यह हम सबके भीतर की आवाज थी पर हम इसे अनसुना करते रहे थे। ऐसी आवाजें सुनने का हमारा अभ्यास नहीं था बल्कि अभी भी हम अपने भीतर इन्हें महसूस ही इसलिए कर पा रहे थे कि काल सिर पर खड़ा था। और वह हममें अब कोई भेद नहीं कर रहा था।

और तब बरगद के एक विशाल पेड़ के नीचे जो कि अभी भी हरा-भरा बना हुआ था हमने पानी की तलाश में कुआँ खोदने का निश्चय किया। नीचे पानी होने की संभावना का हमारा जो भी परंपरागत ज्ञान था उसके हिसाब से यहाँ हर हाल में पानी मिलनेवाला था। हमारे पास इन दिनों कोई भी काम नहीं था। हर कोई खाली था। यह अलग बात थी कि हममें ताकत नहीं बची थी। हम बहुत जल्दी थक जाते। फिर भी हमने जोशोखरोश से कुआँ खोदना शुरू किया। हमने शुरू ही किया था... मुश्किल से पाँच-छह फिट नीचे भी नहीं पहुँचे थे कि कँकरीले पत्थरों की एक मोटी परत से हमारा सामना हुआ। फावड़े की धार मुड़-मुड़ जाने लगी। तब हमने कुदालों का सहारा लिया। कुदालें जब पत्थरों से टकरातीं तो चिनगारियाँ निकलतीं। पर पत्थर जरा भी न निकलता। तब रंबे सामने आए। हम रंबों को पत्थर पर सीधा खड़ा करते और ऊपर से हथौड़े या हन से जोरदार प्रहार करते। बदले में थोड़ा-सा पत्थर टूटता। और पत्थर जितना ही हमारा हौसला टूटता। जल्दी ही हम प्यास से बेदम होने लगते। हमें पानी मिलता और वह अभी गले तक भी न पहुँचा होता कि खत्म हो जाता।

उस कँकरीली परत को तोड़ने में हमें पंद्रह दिन लगे। सामान्य दिनों में शायद पाँच भी न लगते। बावजूद इसके कि हम जानलेवा मेहनत कर रहे थे। यह कुआँ हमारे लिए आखिरी उम्मीद था। कँकरीली परत के नीचे नरम बलुई मिट्टी थी। हमारा काम तेजी से बढ़ने लगा। हम दुगुने उत्साह से खोद रहे थे... जल्दी ही हमें नमी मिलनी शुरू हो गई। हम नए सिरे से जिंदा होने लगे। पर अगले दिन ही हमारी उम्मीदों को दुबारा तगड़ा झटका लगा। नम जमीन के नीचे फिर से सूखी चट्टान मिलनी शुरू हो गई थी। फिर भी हम खोदते रहे। खोदते-खोदते हम इतने नीचे जा पहुँचे थे कि नीचे की आवाज ऊपर मुश्किल से ही पहुँच पाती थी। लगातार मेहनत करते-करते हम पर इतनी थकान हावी हो जाती कि ऊपर आना दूसरा जनम लेने की तरह कठिन लगता।

ऊपर कुएँ से निकाली गई मिट्टी का ढेर लगता जा रहा था। हम पूरी तरह से मिट्टी के रंग में रँग गए थे। हमें देख कर लगता जैसे मिट्टी ही मिट्टी को खोद रही थी। हमारा

सब कुछ मिट्टी का था। हमारा खून, हमारी साँसें सब मिट्टी हो रहे थे। हम मिट रहे थे और मिट्टी खोद रहे थे। एक बार नीचे उतरने के बाद जब हम बाहर निकलते तो कई दिनों तक खड़े होने की भी हिम्मत न पड़ती। अंदर हवा बहुत कम होती। हमारा दम घुटने लगता... पर जैसे एक पागलपन था कि जब तक पानी नहीं मिलता हम खोदना बंद नहीं करेंगें भले ही धरती में आर-पार सूराख हो जाए।

नीले के डर के मारे हमने आसमान की तरफ देखना ही बंद कर दिया था। पर एक दिन धरती पर तैर रही कुछ परछाइयों को देख कर हमने ऊपर देखा तो हमें आसमान का रंग बदलता दिखाई दिया। नीले आसमान में कुछ काले बादल तैर रहे थे। यह एक दुर्लभ दृश्य था। ऐसा लगा कि जैसे हम पहली बार यह देख रहे हों। जो कुएँ खोद रहे थे हमने उन्हें यह बात बतानी चाही पर नीचे तक हमारी आवाज नहीं पहुँच रही थी। हम इतने खुश थे इस क्षण कि हम उन्हें शिवराम पंडित से चिट्ठी लिखवाने जा रहे थे। हम इस बात को भूल ही गए थे कि नीचे जो दो लोग हैं उन्हें पढ़ना तो आता ही नहीं।

नीचे रस्सी लटकी हुई थी उसे बार-बार हिलाया गया। उसे ऊपर खींच कर फिर नीचे छोड़ा गया। कुएँ के मुँह पर डिब्बा और ढोल बजाया गया तब भी नीचे गए लोगों पर उसका कोई असर नहीं दीख पड़ा। हम डर गए थे। दुलारे पटेल के कुएँ की घटना हम सब को याद थी। नीचे अँधेरा था। ऊपर से कुछ दिखाई नहीं दे रहा था। नीचे उतरना जरूरी था पर इसके लिए कोई भी तैयार नहीं हो रहा था तब काका ने मुझे नीचे उतरने के लिए कहा। मैं उतरने ही वाला था कि शिवराम पंडित ने मुझे थोड़ी देर रुकने को कहा और अपनी तीन बैटरीवाली टार्च ले कर आए। टार्च मैंने अपने गले में लटका ली, एक बार आसमान की तरफ देखा और नीचे उतर गया।

मैं बहुत देर तक नीचे उतरता रहा तब जा कर नीचे पहुँचा। नीचे कोई नहीं था। वहाँ मिट्टी निकालने के लिए बाल्टी थी। खोदने के लिए फावड़ा था, रंबा था। पानी के लिए एक चूड़ीदार लोटा था। एक गमछा तक रखा हुआ था पर दोनों खोदनेवालों का कहीं पता नहीं था। यह पूरे सूखे का सब से अविश्वसनीय दृश्य था। इतने लोगों के सामने कुएँ में उतरे हुए दो लोग आखिर कहाँ गुम हो गए थे?

मैं जितनी तेज ऊपर चढ़ सकता था उससे बहुत ज्यादा तेजी से ऊपर चढ़ा। ऊपर पहुँच कर मैं बहुत देर तक हाँफता रहा। उसके बाद जो कुछ भी मैंने बताया उस पर किसी ने भी विश्वास नहीं किया। मेरे काका तक ने नहीं जिनके कहने पर मैं बिना किसी बात की परवाह किए चुपचाप नीचे उतर गया था।

तभी बारिश आई थी, टिप टिप करती बूँदों के साथ।

जितना पानी बरसता सब का सब धरती अपने भीतर सोखती चली जाती। सतह पर उसका कुछ भी न पता चलता। हमने अपने घरों के सारे बर्तन ला कर खुले में रख दिए कि हम उसमें पानी भर सकें। हम भीग रहे थे। हम नाच रहे थे। पर यह हमारी विजय नहीं थी। यह किसे अदेखे की दया थी हम पर। अब पता नहीं क्या करते हम इस दया का।

पानी बरसा तो कई दिनों तक बरसता ही रहा। हमारी आँखों के लिए यह असहनीय दृश्य था। हम बहुत खुश थे, इतने कि यह खुशी बर्दाश्त कर पाने की हालत में नहीं थे। हमें बहुत अच्छा लग रहा था पर अब हमें वे सब याद आ रहे थे जो पानी की एक-एक बूँद के लिए तरसते हुए मर गए थे। तब हमारी आँखों से आँसू नहीं निकले थे पर अब जैसे पानी के साथ-साथ आँसुओं की भी बाढ़ आ गई थी। हम चिल्ला-चिल्ला कर रो रहे थे। हम चीख रहे थे। उन सबका नाम ले-ले कर उन्हें पुकार रहे थे कि आओ... आओ देखो पानी बरस रहा है। आओ प्यास बुझाओ अपनी... कौन आता!

पर बरसात ने एक नई विपत्ति हम पर थोप दी थी। हम बहुत प्यासे थे पर धरती हमसे भी ज्यादा प्यासी थी। धरती में दरारें ही दरारें थीं। वह अपनी बहुत सारी दरारों से जी भर के पानी पी रही थी। जल्दी ही धरती को अपच हो गया। दरारें हर जगह फैली थीं... हमारे घरों के भीतर तक... हमारे मन के बहुत भीतर तक। इस बीच इन दरारों में न जाने कितने जहरीले कीड़े-मकोड़े भर गए थे। अब इन दरारों में पानी की तरलता जा रही थी तो ये बाहर निकल रहे थे। बाहर पानी ही पानी था। हमारे घरों की दीवालों से ले कर ठाठ तक वही-वही कीड़े थे। हमारे बिस्तरों पर वही सो रहे थे। वे बहुत थे और हममें ताकत भी नहीं थी कि हम उन सबको मार डालते या अपने घरों से बाहर खदेड़ आते।

हम उन घिनौने कीड़ों से बचने के हर जतन करते और वे उन्हें आसानी से धता बता देते। वे हमारे कपड़ों में समा जाते नाक और कान में अपने लिए जगह खोजते। हम उन्हें मारते तो कई बार इतनी भयानक बदबू आती कि बदबू से ही मर जाने का मन करता। कई बार वे हमें काट खाते। उनके काटने की जगहें पक आतीं। उनमें से मवाद बहने लगता। सड़ने लगता शरीर धीरे धीरे। भयानक दर्द होता... चीखने-चिल्लाने से कान फटते।

इतना जैसे कम था कि हमारे घरों ने एक-एक कर गिरना शुरू किया। दीवालें अचानक से आई इस खुशी को बर्दाश्त नहीं कर पाईं... उनके भीतर एक घातक नमी ने पाँव पसार लिया था। और मिट्टी की दीवारें मिट्टी में मिल जाने का ख्वाब साकार कर रही थीं। गाँव समतल हो रहा था। सारी दरारें भर रही थीं। पानी सड़ रहा था और एक न बर्दाश्त होनेवाली बदबू फैल रही थी हमारे चारों ओर। पर हम बहुत मजबूत लोग थे। हम इतना सब कुछ सह कर भी एक आश्चर्य की तरह से जिंदा थे। और अब जिंदा ही रहनेवाले थे।

मगन की छत पर बैठे हुए हम कुल बहत्तर लोग हैं। जो हमें छोड़ कर चले गए या जो जेल में हैं, हम उनकी गिनती नहीं कर रहे हैं। हमें नहीं पता कि यहाँ से जाने के बाद उन पर क्या बीती! हम नहीं जानते कि उनमें से कितने जिंदा हैं और कितने रास्ते में आने वाली जानलेवा मुसीबतों की भेंट चढ़ गए। पर कुछ तो होंगे जो बाहर से लौट कर आएँगे। हम भूखे प्यासे हैं कई दिन से। प्यास बहुत बढ़ जाती है तो वही बारिश का सड़ा हुआ एक चुल्लू पानी डाल लेते हैं भीतर। कुछ भी हो अब हमें उसकी परवाह नहीं है। पर अब हमें कुछ नहीं होगा, हम जानते हैं। हमारे भीतर जीवन पनप रहा है फिर से। उन ठूँठ पेड़ों के साथ जिनमें नई कोंपलें इतनी दूर से भी दिखाई देने लगी हैं। हमें अभी से वो हरियाली दिखाई देने लगी है जो हमारी आँखों का सूखा खत्म करेगी। हम जानते हैं कि जब पानी सूखेगा तो एक नई धरती हमारा इंतजार कर रही होगी। घास और नमी और जीवन से भरी। इस पर हम बहत्तर लोगों में कोई बहस नहीं है कि हम इस हरियाली को कायम रखेंगे।

हम जो बचे हैं इसे हमारा सामूहिक बयान माना जाय।

https://www.hindiadda.com/pani-manoj-kumar-pandey/